ੴ सतिगुर प्रसादि ॥
गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक
गुरमति ज्ञान

माघ-फाल्गुन, संवत् नानकशाही ५४७
वर्ष ९ अंक ६ फरवरी 2016

संपादक : सिमरजीत सिंघ
सहायक संपादक : गुरप्रीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन : 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304
फैक्स : 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

ISSN 2394-8485

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

सिरीरागु महला १ ॥
लेखै बोलणु बोलणा लेखै खाणा खाउ ॥ लेखै वाट चलाईआ लेखै सुणि वेखाउ ॥
लेखै साह लवाईअहि पड़े कि पुछण जाउ ॥१॥ बाबा माइआ रचना धोहु ॥
अंधै नामु विसारिआ ना तिसु एह न ओहु ॥१॥रहाउ॥ जीवण मरणा जाइ कै एथै खाजै कालि ॥
जिथै बहि समझाईऐ तिथै कोइ न चलिओ नालि ॥ रोवण वाले जेतड़े सभि बंनहि पंड परालि ॥२॥
सभु को आखै बहुतु बहुतु घटि न आखै कोइ ॥ कीमति किनै न पाईआ कहणि न वडा होइ ॥
साचा साहबु एकु तू होरि जीआ केते लोअ ॥३॥ नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥४॥ *(पन्ना १५)*

उपरोक्त शबद में श्री गुरु नानक देव जी फरमान करते हैं कि हमारा बोलचाल, हमारा खाना-पीना थोड़े ही समय के लिए है; जिस जीवन-सफर में हम चल रहे हैं वो सफर भी थोड़े ही समय के लिए है तथा ये जो दुनिया के रंग-तमाशे हैं ये भी कुछ ही समय के लिए हैं। आगे गुरु जी कहते हैं कि हे भाई! यह जो माया का खेल है यह भी कुछ ही दिनों का है। इस कुछ दिन के माया के खेल में मस्त हुआ मनुष्य प्रभु का नाम जपना भी भूल गया है। न माया साथ निभी और न ही प्रभु-नाम की कमाई हो सकी। 'रहाउ' के बाद गुरु जी का कथन है कि मनुष्य संसार में जन्म लेने के बाद उम्र भर पदार्थवाद में ही फंसा रहता है। जिन संगी-साथियों के लिए मनुष्य यह सब दुनियावी भाग-दौड़ करता है उनमें से कोई भी उसका साथ नहीं निभाता जब जीवन भर के कर्मों का हिसाब किया जाता है। मनुष्य के मरने के बाद उसको रोने वाले अब पराली की गांठें लिए घूम रहे हैं जिसका मरे मनुष्य को अब कोई लाभ नहीं।

हे भाई! सभी लोग धन-पदार्थों की मांग करते हुए अधिक से अधिक की ही मांग करते हैं, थोड़े की मांग कोई भी नहीं करता। किसी ने भी मांगने से कभी तौबा नहीं की अर्थात् कोई नहीं कहता कि अब और धन-पदार्थ नहीं मांगने। हे प्रभु! एक तू ही सदा कायम रहने वाला है, शेष सब नाशवान है। गुरु नानक साहिब कहते हैं कि हे प्रभु! तू मेरा उन्हीं के संग साथ बनाना जो दुनिया के लोगों की नज़रों में नीची से नीची जाति के हैं। मैं उन (तथाकथित) नीचों का साथ चाहता हूं, (तथाकथित) बड़ों (धनवान) के मार्ग पर चलने की मुझे कोई इच्छा नहीं। मुझे पता है कि तेरी कृपा वहीं पर होती है जहां गरीबों (नीचों) की ख़बरसार ली जाती है।

तात्पर्य यह कि हमें अपनी आजीविका की कमाई करते हुए केवल प्रभु-नाम की ही मांग करनी चाहिए तथा उसका जाप करते हुए ही जीवन सफल बनाना चाहिए। हमें ऊंचे बनने की अहं भावना को त्याग कर प्रभु का अदना-सा शिष्य बन कर रहना चाहिए।

घल्लूघारों व मोर्चों वाला संघर्षमयी इतिहास : सिक्ख पंथ की गौरवशाली विरासत

संघर्ष अथवा जद्दोजहद करना मनुष्य के भाग्य में परमात्मा ने खुद लिखा हुआ है। संघर्ष रूपी भट्ठी में तपकर ही मनुष्य मात्र का व्यक्तित्व निखर सकता है। संघर्ष ही वास्तव में मानवीय जीवन में विकास व विगास का एक मूल कारक अथवा प्रेरक है। इस धरती पर मनुष्य को अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए सदैव ही उद्दम एवं प्रयास करना पड़ता है। जो मनुष्य मात्र इस सच्चाई को जानता, पहचानता है; वही मनुष्य विकास-मार्ग में गतिशील रह सकता है। चलते रहना ही जीवन का सूचक है। जीवन में ठहराव खटकता है। इसी लिए मनुष्य को कभी भी संघर्ष करने से आनाकानी नहीं करनी चाहिए।

मनुष्य मात्र मुख्य रूप में दो महाज़ों पर संघर्ष करता है-- व्यक्तिगत स्तर पर तथा सामूहिक स्तर पर। दोनों तरह के संघर्षों का अपना-अपना महत्त्व है। सामूहिक स्तर पर किया जाने वाला संघर्ष व्यापक स्वरूप-स्वभाव वाला होने के कारण अधिक महत्त्व रखता है।

वैसे तो विश्व में लगभग प्रत्येक कौम को संघर्ष करना ही पड़ता रहा है किंतु कुछेक कौमें ऐसी हैं, जिनका संघर्ष के साथ सदैवकालीन एवं विलक्षण सम्बंध रहा है। सिक्ख पंथ को विश्व की ऐसी कौमों में गिना जाता है। सिक्ख पंथ के प्रवर्त्तक श्री गुरु नानक देव जी अपने जीवन को एक अद्वितीय उदाहरण के रूप में अपने साजे-निवाजे (सुसृजित) सिक्ख पंथ के समक्ष प्रस्तुत करते हुए इसको कूड़ व जाबिर ताकतों के विरुद्ध संघर्ष करने एवं हक-सच को स्थापित करने हेतु एक ऐसी जन्मघुट्टी बख़्शिश की कि कूड़ के खिलाफ़ अड़ना एवं लड़ना सिक्ख पंथ का स्वभाव ही बन गया। गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख अपने सामने कूड़ का व्यवहार घटित होता देखकर, उसके विरुद्ध कार्यशील होने से रह ही नहीं सकता। उसके गुरु द्वारा उसको दिया गया भरोसा कि कूड़ ने अंततः नाश होना ही होता है तथा अंतिम जीत सच की होकर रहती है; उसके सदैव सामने रहता है। सिर्फ सामने ही नहीं बल्कि यह उसके रोम-रोम में बसा भी हुआ है। इसी सम्बंध में सिक्ख पंथ का अब तक का इतिहास मुख्य रूप में कूड़-कुसत्य रूपी ताकतों के खिलाफ़ हक-सच की पुनः स्थापिती हेतु अड़ने, लड़ने व जूझने का इतिहास है।

सिक्ख पंथ के संघर्षों भरे इतिहास में फरवरी का महीना प्रत्येक वर्ष आकर पंथक स्तर पर हक-सच की पुनः स्थापिती हेतु लड़े गए बहुत ही कठिन संघर्ष की दासतान याद दिलाता है। इसी महीने सिक्ख पंथ पर अफ़गान हमलावर अहमद शाह अब्दाली ने सन् १७६२ ई में बहुत बड़ी संख्या में अपनी फौजों द्वारा हमला कर सिक्ख पंथ के वजूद को मिटाने के मंद इरादे को अमल में लाने का प्रयत्न किया। मलेरकोटला के समीपस्थ कुप्परहीड़े में उसने एक बड़े सिक्ख समूह को घेरकर सिक्ख पंथ की नसलकुसी करने की घटिया करतूत की। ये सिक्ख, समूह सिक्ख परिवारों का समूह था, जिसमें बहुत बड़ी संख्या में सिक्ख स्त्रियां, बच्चे तथा बुजुर्ग शामिल थे। सिंघों की संख्या अब्दाली की फौज के सामने बहुत अल्प थी। अब्दाली बिना सोची तीव्र गति से सिक्ख समूह पर आकर हमलावर हुआ था। फिर भी स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया, स. जस्सा सिंघ रामगढ़िया तथा सरदार चढ़त सिंघ जैसे सिक्ख सरदारों की अगुआई में सिक्ख योद्धाओं ने अब्दाली के हमले को रोकने हेतु बहुत ज़ोरदार व बेमिसाल जद्धोजहद किया। सिक्ख इतिहास के रचनहारों ने लिखा है कि सिक्ख परिवारों को सिंघों ने बचाने की इस तरह कोशिश की जैसे मुर्गी अपने चूजों को बचाती है। किंतु फिर भी सिक्ख पंथ का भारी मात्रा में कौमी नुकसान इस घल्लूघारे में हुआ। लगभग तीस हज़ार संख्या में जानी नुकसान को सहन कर अपना वजूद (अस्तित्व) बचाए

रखना एवं मानसिक व आत्मिक समतोल कायम रखना विश्व भर में एकमात्र गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख पंथ तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के साजे-निवाजे खालसा पंथ के हिस्से ही आया है। स्मरण रहे कि इस घल्लूघारे के कुछ महीने बाद ही सिंघों ने श्री अमृतसर में अब्दाली की फौज पर हमला कर उसको यह एहसास करवाया कि सिक्ख पंथ में अभी भी उसको खिझाने और दौड़ाने का दम और हौसला है। इसके पश्चात अब्दाली सिक्ख पंथ की तरफ मंद इरादे से देखने का साहस नहीं जुटा पाया और श्री हरिमंदर साहिब, श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर के अपमान के बदले अपनी करनी का फल भोगता हुआ इस नाशमान दुनिया से कूच कर गया था। खालसे ने विभिन्न सिक्ख मिसलों के अधीन पंजाब पर और महाराजा रणजीत सिंघ ने पंजाब एवं पंजाब से बाहर दूर-दूर तक अकाल पुरख की फ़तहि (विजय) के झंडे झुला दिए थे।

बीसवीं शताब्दी से अंग्रेज शासकों-प्रशासकों के जुल्म-ज़ब्र के विरुद्ध गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख पंथ को कई मोर्चे लगाने पड़े। इनमें से साका श्री नानकाणा साहिब और जैतो का मोर्चा अस्मरणीय सिक्ख इतिहास की सृजना करते हुए हमारे समक्ष दृष्यमान होते हैं।

विदेशी शासक सिक्ख पंथ के जान से बढ़कर गुरुद्वारा साहिबान की पवित्रता को भंग करने के घिनौने प्रयत्न कर रहे थे। समय के व्यतीत होने पर गुरुद्वारा साहिबान के महंत ऐशप्रस्त होकर सिक्ख संगत के सिक्खी जज़्बातों को ज़ोरदार ठेस पहुंचा रहे थे। वह पवित्र गुरुद्वारा साहिबान में गैर-आचरण (अमानवीय) करतूतें कर रहे थे। श्री ननकाणा साहिब का महंत नरैण दास बहुत ही बिगड़ चुका था। जब सिक्ख संगत ने उसके नापाक हाथों से प्रबंध छींनकर सिक्ख पंथ के हाथ में देने का बीड़ा उठाया तो तत्कालीन हाकिमों की शह पर उसने गुरुद्वारा साहिब की परिसर में गुंडे, बदमाश रख ले। सिक्ख जत्थेदार लक्षमण सिंघ धारोवाली की अगुवाई में गुरुद्वारा साहिब का प्रबंध लेने के लिए शांतमयी रहने का प्रण करके गए। जत्थे को बंदूकों, छवियों और गंडासों से हमला कर शहीद कर दिया। इस साके में सैंकड़ों सिक्ख शहीद हुए परंतु अंततः तत्कालीन निज़ाम को सिक्खी सिदक के समक्ष झुकना पड़ा और इस तरह ननकाणा साहिब का प्रबंध सिक्ख प्रबंध के अपने हाथों में आ सका।

जैतो का मोर्चा तत्कालीन अंग्रेज सरकार की गुरुद्वारा श्री गंगसर जैतो (फरीदकोट) में नजायज़ दखलांदज़ी के प्रतिक्रम द्वारा भड़का जबकि गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख, सिक्ख पंथ के साथ चट्टान की तरह खड़े रहने वाले पंथक भावना के धारणी नाभे के सिक्ख राजा स. रिपुदमन सिंघ के साथ हो रहे राजनीतिक स्तर पर अन्याय के विरुद्ध शांतमयी ढंग से रोष प्रकट कर रहे थे। इस समय सिक्ख संगत ने सिक्ख पंथ की प्रतिनिध संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर की अगुआई में शांतमयी संघर्ष किया। यह संघर्ष बहुत लंबा खिंच गया। तत्कालीन सरकार ने प्रत्येक पैंतरा इस संघर्ष को नाकाम बनाने के लिए प्रयोग किया परंतु अंततः सिक्खी सिदक के सामने सरकार को झुकना ही पड़ा। स्मरण रहे कि इस ऐतिहासिक सिक्ख संघर्ष में सिक्खों का ज़ोरदार स्मर्थन गैर-सिक्ख राजनीतिक आगुओं ने भी किया। फरवरी, १९२४ ई का इस मोर्चे में अहम समय है। २१ फरवरी, १९२४ ई को श्री अकाल तख़्त साहिब, श्री अमृतसर से जैतो में पहुंचे ५०० सिंघों के शहीदी जत्थे को पुलिस ने गोलियां चलाकर बड़ा गोली कांड प्रदर्शन किया। १०० के लगभग सिंघ शहीद हुए और २०० के लगभग सिंघ जख़्मी हुए। इसके बाद भी लगभग डेढ वर्ष तक सिक्ख पंथ को घोर संघर्ष से गुज़रना पड़ा किंतु आखिर सरकार को २७ जुलाई, १९२५ ई को गुटने टेकने पड़े। गुरुद्वारा गंगसर में सरकार द्वारा श्री अखंड पाठ साहिब पर लगाई गई पाबंदी हटाने के एलान के साथ ७ अगस्त, १९२५ ई को १०१ श्री अखंड पाठ साहिब सम्पूर्ण करते हुए जैतो के मोर्चे को फ़तहि किया गया। घल्लूघारों और मोर्चों के साथ भरपूर हमारा गौरवमयी सिक्ख इतिहास हमे वर्तमान में भी प्रत्येक समकालीन जुल्म, ज़ब्र और अन्याय के विरुद्ध अड़ने, लड़ने और हक-सच की पुनः स्थापिती करने हेतु तनदेही से प्रयत्नशील होने के लिए प्रेरणा बख़्शिश करता आ रहा है। ❁

गुरमति में बुजुर्गों का सम्मान

-प्रो किरपाल सिंघ बडूंगर*

विश्व कब और कितनी बार अस्तित्व में आया व नष्ट हुआ। इस सम्बंधी अलग-अलग धर्मों और विद्वानों ने अपने-अपने विचार समय-समय पर प्रकट किए हैं। गुरमति इसके बारे में इस प्रकार समझ बख़्शिश करती है :

-साचे ते पवना भइआ पवनै ते जलु होइ ॥
जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि घटि जोति समोइ ॥
(पन्ना १९)

-थिति वारु ना जोगी जाणै रुति माहु ना कोई ॥
जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ॥
(पन्ना ४)

-कई बार पसरिओ पासार ॥ (पन्ना २७६)

समाज प्रारंभिक हालातों में अस्तित्व में आने के उपरांत प्रत्येक क्षेत्र में विकास करता रहा और प्रत्येक क्षेत्र में चोटियों को स्पर्श करता रहा; शोधार्थियों द्वारा की गई शोध इस तथ्य की हामी भरती है। समाज असभ्य से सभ्य बना। कोई समाज कितना कु सभ्य है। कितना विकसित है, इसका अनुमान उस समाज के लोगों का आचरण, व्यवहार, आहार, सोच-समझ, परस्पर प्रेम-प्यार, परस्पर प्यार-सम्मान, परस्पर सहयोग और सहहोंद भावार्थ समूचे रूप में उसकी संस्कृति से लगाया जाता है। मनुष्य के जीवन को प्रमुख रूप से दो हिस्सों में बांटा जा सकता है-- एक उसका अंदरूनी संसार और दूसरा बाहरी संसार अर्थात् उसका आध्यात्मिक जीवन एवं सांसारिक जीवन। गुरबाणी समूचे संसार के लिए दोनों संसारों अर्थात् दोनों ही जीवन मार्ग में अगुआई करती है। *"गुरबाणी इसु जग महि चानणु"* के अनुसार गुरमति सम्पूर्ण संसार के लिए आध्यात्मिक और सांसारिक (सामाजिक) जीवन की सार्थकता के लिए उचित जीवन युक्ति है। इस निबंध में "गुरमति में बुजुर्गों का सम्मान" विषय पर संक्षेप रूप में विचार करने का तुछ प्रयत्न किया जा रहा है।

ऊपरी नज़र मारने से ही समझ पड़ती है कि संसार अनेकों ही धर्मों, जातियों, नसलों, रंगों, रूपों, सभ्याचारों, सम्बंधों और सोचों वाला प्रकृति का बहुरंगी तथा बहुभांति *"आपे हरि इक रंगु है आपे बहु रंगी ॥"* का अलौकिक नज़ारा प्रस्तुत करता है। प्रत्येक समाज अनेकों ही रिश्तों-नातों में बंटा हुआ है। इन रिश्तों-नातों का समाज में अपना-अपना स्थान, फर्ज़, अधिकार, जिम्मेदारी और कार्य है। गुरबाणी जीवन को प्रमुख रूप से *"बाल जुआनी अरु बिरधि फुनि तीनि अवसथा जानि ॥"* में बांटती है। बाल्य अवस्था में बच्चा प्रत्येक पक्ष से अपने माता-पिता और बड़े भाई, बहनों व रिश्तेदारों पर निर्भर करता है। वृद्ध अवस्था में चाहे मनुष्य अपने बच्चों, अपने छोटे भाई-बहनों या अन्य रिश्तेदारों पर निर्भर करने लग जाता है परंतु जीवन में अलग-अलग क्षेत्रों में उस द्वारा किए गए संघर्ष से गुज़रते हुए प्राप्त अनुभव, ज्ञान, जीवन की अटल सचाई मूल्यवान होती हैं जो वह अपने बच्चों तथा छोटे भाई, बहनों व अन्य रिश्तेदारों या उसके संपर्क में आते प्रत्येक मनुष्य मात्र के लिए बहुमूल्य होते हैं। सबसे बड़ी बात माता-पिता की आशीष, आशीर्वाद और हर समय दिया जाता प्यार भरा थापड़ा एक ऐसी निर्मोलक वस्तु है जिसका दुनिया की किसी भी कीमती से

*भूतपूर्व अध्यक्ष,शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर। फोन: +९१९९१५८-०५१००

कीमती वस्तु से मुकाबला नहीं किया जा सकता। गुरु साहिब जब यह समझाते हैं कि :

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ॥
(पन्ना ४७३)

मनुष्य माता के उदर से पैदा हो सकता है और फिर माता-पिता ही उसकी परवरिश और देखभाल करते हैं जो एक प्राकृतिक कार्य ही है। परमात्मा हमारा :

जिनि तूं साजि सवारि सीगारिआ ॥
गरभ अगनि महि जिनहि उबारिआ ॥
(पन्ना २६६)

रचनहार, सृजनहार, पालक और प्रत्येक प्रकार की दात बख़्शिश करने वाला बड़ा दाता है। इन ज्यादातर कार्यों को अंज़ाम देने के लिए माता-पिता ही एक साधन हैं, इस तरह माता-पिता धरती पर चलते-फिरते प्रभु रूप ही हैं। माता-पिता का कर्ज़ मनुष्य कई जन्म लेकर भी नहीं उतार सकता। पिता जान मारकर, कड़ा परिश्रम कर अपने बच्चों की अच्छी परवरिश के लिए कमाई करता है; अनेकों कष्ट सहता है। इससे कहीं बढ़कर माता बच्चे को अपने उदर (गर्भ) में नौं माह से भी अधिक रखती है। उदर में बच्चा माता के रक्त, मिझ से ही बनता और विकसित होता है। उसके आहार में हिस्सेदार बनता है, बच्चों के जन्म के समय माता को असहनीय और अकथनीय जन्म पीड़ा सहन करनी पड़ती हैं। उपरांत अपने सम्पूर्ण सुख-आराम कुर्बान कर जी-जान से उसकी परवरिश करती है। उसका गंद-मंद धोती है और उसको साफ-सुथरा रखती है। माता-पिता अपने बच्चों के अच्छे-खुशहाल जीवन के लिए हर तरह की कुर्बानी करते हैं। माता की सबसे बड़ी खुशी तब होती है जब उसका बच्चा उसकी गोद में पड़ा उसका दूध पी रहा होता है और वह उसको अशीषमयी लोरियां दे रही होती है। बड़े होने पर जब माता महसूस करती है कि उसके द्वारा तैयार किया भोजन खाकर बच्चा खुश और आनंदित हो गया है। वह खुशी में प्रफुल्लित हो जाती है। बच्चों द्वारा शिक्षा, खेलों अथवा अन्य क्षेत्रों में प्राप्त की गई प्राप्तियां (सफलताएं) माता-पिता के लिए एक खुशी भरा खज़ाना होता है। उनका बच्चा अच्छे व्यवसाय में स्थापित हो जाए तो माता-पिता अपना किया गया परिश्रम सफल समझते हैं। माता-पिता की खुशी का एक अन्य ऐसा मौका आता है जब वह फूले नहीं समाते, वह होता है जब वह पूरे हर्षोल्लास के साथ अपने बेटे-बेटी का आनंद कारज करते हैं। चाहे कई बार उनको आर्थिक तौर पर बहुत-सा जोख़िम भी उठाना पड़ता है। जब किसी पुत्र या पुत्री को जीवन के किसी भी क्षेत्र में कोई फ़ख़्र करने योग्य सफलता मिलती है तो वह उस खुशी को सबसे पहले अपने माता-पिता के साथ सांझा करना चाहते हैं और सफलता का पता लगने पर माता-पिता की खुशी की भी कोई सीमा नहीं रहती। ऐसा रिश्ता होता है माता-पिता और संतान का! श्री गुरु अमरदास जी को जब श्री गुरु अंगद देव जी के रूप में सच्चे सतिगुरु की प्राप्ति हो गई तो वह धन्य हो गए। आत्मिक संतुष्टि प्राप्त हो गई तो फिर अपने आप ही अपनी सम्माननीय माता जी को संबोधित होते हुए पुकार उठते हैं :

अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरू मै पाइआ ॥
सतिगुरु त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ ॥ *(पन्ना ९१७)*

इसके साथ ही एक और अवसर खुशियों भरा आता है जब वह दादा-दादी या नाना-नानी बन जाते हैं। कुछ समय बाद जैसे सूर्य सुबह उदय होता है, दोपहर को शिखर पर होता है, तीसरे पहर (शाम) ढलता है और (रात्रि) में अस्त हो जाता है। मानवीय जीवन भी ऐसे ही चलता है, माता-पिता की आयु का तीसरा पहर और फिर बुढ़ापा आ जाता है। फिर जैसे

मालवा क्षेत्र की पंजाबी लोकोक्ति है, "कदे बाबे दीआं अते कदे पोते दीआं" भावार्थ पहले दादा-दादी बच्चों को उंगली लगाते हैं, उसका सहारा बनते हैं और बुढ़ापे में वही बच्चे माता-पिता और दादा-दादी का सहारा बनते हैं। बस! यही समय होता है उन बच्चों से बड़े नवयुवक हुए पुत्रों-बहुओं के इम्तिहान का। क्या वह अपने माता-पिता, बुजुर्गों के प्रति अपना फर्ज़ पहचानते हैं अथवा नहीं? बच्चों और माता-पिता के बीच लुप्त हो रहे प्यार-सम्मान के कारण परिवारों में उथल-पुथल हुई है और हमारा सम्पूर्ण सामाजिक ढांचा बिखरा पड़ा है जो कि गंभीर चिंता का विषय है। समय बहुत तीव्र गति से चल रहा है, समय की तीव्र गति के साथ-साथ मनुष्य की सोच भी बदल रही है। किसी समय माता-पिता का मान-सम्मान, सेवा आदि प्रभु रूप समझकर की जाती थी परंतु प्रत्येक बुजुर्ग और विशेषत अध्यापक का सम्मान भी ज्ञान-गुरु के रूप में किया जाता था परंतु अब समय पदार्थवादी आ गया है। मनुष्य के लिए सभी नेकियां, परोपकार, प्यार, सम्मान, प्रेम, सहिहोंद माता-पिता, बुजुर्गों तथा अध्यापकों का सम्मान लगभग ज़िंदगी से समाप्त (लुप्त) ही हो गया है। इस सदाचार से कोरी निरमोही (प्यार विहीन) पदार्थवादी सोच व तथाकथित आधुनिकता द्वारा गुमराह हुई नौजवान पीढ़ी अपने सामाजिक फर्ज़ों से भागकर अपने बुजुर्गों को ऐसे पछाड़ (रौंद) रही है जैसे किसी फटी-पुरानी लीर को कीकर के पेड़ पर फेंक देते हैं। अंग्रेजी की लोकोक्ति है, "DO UNTO OTHERS AS YOU WISH TO BE DONE BY" भावार्थ आप दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करो, जिस तरह के व्यवहार की आप स्वयं आशा रखते हैं। यह बात नवयुवक पीढ़ी के समझने योग्य है परंतु आधुनिक मनुष्य तो हलकाए कुत्ते की तरह माया-पदार्थों के पीछे पड़ा हुआ है। गुरु साहिब मनुष्य की ऐसी सोच के बारे में ऐसे स्पष्ट करते हैं :

-जिउ कूकरु हरकाइआ धावै दह दिस जाइ ॥
लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ ॥
(पन्ना ५०)

-देसु कमावन धन जोरन की मनसा बीचे निकसे सास ॥ *(पन्ना ४९६)*

भावार्थ प्रत्येक मनुष्य अधिक से अधिक राजसी एवं दूसरी शक्ति की प्राप्ति, अधिक से अधिक धन इकट्ठा करने और बड़ी-बड़ी संपत्तियां बनाने, खूब ऐशो-आराम में व्यस्त है। कोई सिद्धांत, कोई मर्यादा, कोई नैतिकता, कोई सामाजिक कदरें-कीमतें उसके लिए मायने नहीं रखती और उसकी ज़िंदगी का एजंडा मतलबप्रस्ति, निजप्रस्ति और खुदगर्ज़ी पर आधारित है। धर्म, कर्म, पुण्य-दान, नेकी-परोपकार, गरीबों-ज़रूरतमंदों की सहायता उसकी ज़िंदगी का दिखावा और अडंबर बनकर रह गया है। धार्मिक स्थानों पर जाना, सम्पूर्ण इच्छाओं की पूर्ति के लिए प्रार्थना और विनती करना केवल एक वणज और दिखावा ही बनकर रह गया है। यह सब कुछ निजी स्वार्थ एवं अहंकार अधीन किया जा रहा है क्योंकि *"वडे वडे जो दीसहि लोग ॥ तिन कउ बिआपै चिंता रोग ॥"* का ही बोलबाला है। यह तो *"बिना संतोख नही कोऊ राजै ॥"* वाली बात ही है। माता-पिता या अन्य बुजुर्ग उसके लिए एक अनावश्यक भार ही बनकर रह गए हैं। गुर इतिहास पर दृष्टि डालते हुए समझ पड़ती है कि भाई लहिणा जी श्री गुरु नानक देव जी की सेवा में रहने, उनकी आज्ञा का पालन करने के कारण ही प्रवान चढ़े और श्री गुरु अंगद देव जी बने एवं इसी तरह ही श्री गुरु अमरदास जी श्री गुरु अंगद देव जी की सेवा में मग्न, आज्ञा का पालन करते श्री गुरु अमरदास जी सजे और घुंघनियां (उबले चने) बेचने वाला अनाथ भाई जेठा श्री गुरु अमरदास

जी की प्रत्येक आज्ञा का पालन और सम्मान करते हुए सेवा-सिमरन कर सोढ़ी सुलतान श्री गुरु रामदास जी बने। श्री गुरु रामदास जी के आज्ञाकारी पुत्र होने के कारण ही श्री गुरु अरजन देव जी बाणी के बोहिथ, शहीदों के सिरताज श्री गुरु अरजन देव जी बने। सम्पूर्ण गुर इतिहास और सिक्ख इतिहास इस तरह की असंख्य मिसालों से भरा पड़ा है। गुरु के सिक्खों ने भी गुरु साहिबान का अंतःकरण से सम्मान, सेवा, सिमरन और आज्ञाकारी होकर महान कुर्बानियां भी दीं और बड़े मुकाम भी हासिल किए। निश्चय ही बुजुर्गों की सेवा, आज्ञाकारिता व सम्मान के तुल्य अन्य कोई धर्म कार्य नहीं है; बुजुर्गों के अंतःकरण से दी अशीष, आर्शीवाद, शाबाश के तुल्य कोई भी पुण्य-दान, हवन, यज्ञ, पाठ, पूजा एवं धार्मिक यात्रा नहीं है। उनकी अशीष तो परमात्मा की रहमत ही होती है। भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में ऐसे हालातों के बारे में भरपूर प्रकाश डाला है। भाई साहिब तो हमें स्पष्ट रूप में समझाते हैं कि जिसके घर-परिवार में उनके बुजुर्ग मौजूद हैं उनकी सेवा और आज्ञाकारिता से बड़ा न तो कोई पुण्य है न ही कोई अन्य उत्तम कार्य है। प्रभु रूपी माता-पिता की आज्ञा में रहते हुए उनकी तन, मन से की सेवा और माता-पिता बुजुर्गों के प्रसन्न होकर धुर अंतःकरण से दी अशीष तो प्रभु रहमत ही होती है। श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने पुत्र श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब जी के स्वस्थ एवं अरोग्य हो जाने पर जो शबद उच्चारण किया वह सभी माताओं द्वारा अपने बच्चों के लिए अशीष है और यह भी स्पष्ट हो जाता है कि माता-पिता किस तरह अपने बच्चों के लिए अरदास-विनती करते हैं और अशीष व आशीर्वाद देते हैं :

पूता माता की आसीस ॥
निमख न बिसरउ तुम्ह कउ हरि हरि सदा भजहु जगदीस ॥ *(पन्ना ४९६)*

माता-पिता को अनदेखा कर, उनका अपमान कर, उनको अकेलेपन में झूरने और मन ही मन में बिन बोले विर्लाप करने के लिए अपने हालात पर छोड़कर चाहे आप कितनी भी धार्मिक यात्राएं करें, चाहे कितनी बार धार्मिक स्थानों पर नाक रगड़ें, पुण्य-दान करें, पाठ, पूजा, हवन-यज्ञ आदि कितना मर्ज़ी करो सब व्यर्थ हैं। यह आडंबर परमात्मा के घर प्रवान नहीं है। बल्कि यह तो अपनी हउमै को बल देने के तुल्य है। अकाल पुरख घट-घट की जानने वाला है :

विणु बोलिआ सभु किछु जाणदा किसु आगै कीचै अरदासि ॥ *(पन्ना १४२०)*

भाई गुरदास जी की वार आधुनिक नवयुवक पीढ़ी के लिए बहुत ही प्रेरणादायक है और उपरोक्त सच्चाई को स्पष्ट करती है। भाई गुरदास जी तो माता-पिता के बिना अन्य किसी भी धार्मिक स्थान को बड़ा तीर्थ स्थान ही नहीं मानते, वह लिखते हैं :

मां पिउ परहरि सुणै वेदु भेदु न जाणै कथा कहाणी।
मां पिउ परहरि करै तपु वणखंडि भुला फिरै बिबाणी।
मां पिउ परहरि करै पूजु देवी देव न सेव कमाणी।
मां पिउ परहरि न्हावणा अठसठि तीरथ घुंमणवाणी।
मां पिउ परहरि करै दान बेईमान अगिआन पराणी।
मां पिउ परहरि वरत करि मरि मरि जंमै भरम भुलाणी।
गुरु परमेसरु सारु न जाणी ॥ *(वार ३७:१३)*

सतिगुरु मनुष्य को कर्मकांडों, पाखंड और मनुष्य की स्थापित की भर्म-भुलेखे पर आधारित वस्तुओं की पूजा से विवर्जित हैं क्योंकि वो मनुष्य को कुछ देने के योग्य नहीं है बल्कि प्रभु रूप

माता-पिता की अशीष तो मनुष्य को सम्पूर्ण गलतियों और पाप बख़्शने के समर्थ होती है। बच्चे माता-पिता की संपत्ति, धन-दौलत पर तो आंख रखते हैं और उसकी तुरंत प्राप्ति के लिए हमेशा ही उतावले रहते हैं क्योंकि वह उनके "वारिस पुत्र" हैं परंतु पुत्र का माता-पिता के प्रति नैतिक और सामाजिक फर्ज़ क्या है उसको निभाने से हमेशा दूर भागते हैं। ऐसे लगता है जैसे माता-पिता और संतान का रिश्ता भी स्वार्थी ही बनता जा रहा है। श्री गुरु रामदास जी अपने बड़े पुत्र प्रिथी चंद को सम्बोधित होते हुए हर समय की नवयुवक पीढ़ी को ऐसे समझाते हैं :

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप ॥
जिन के जणे बडीरे तुम हउ तिन सिउ झगरत पाप ॥रहाउ॥
जिसु धन का तुम गरबु करत हउ सो धनु किसहि न आप ॥
खिन महि छोडि जाइ बिखिआ रसु तउ लागै पछुताप ॥
जो तुमरे प्रभ होते सुआमी हरि तिन के जापहु जाप ॥
उपदेसु करत नानक जन तुम कउ जउ सुनहु तउ जाइ संताप ॥ *(पन्ना १२००)*

श्री गुरु अरजन देव जी भी बच्चों द्वारा जाने-अनजाने में की गई असंख्य गल्तियों को पिता द्वारा अपने बच्चों को समझा-बुझाकर तथा डांट-डपट कर माफ कर देने के गुणों के बारे में प्रकाश डालते हैं। वास्तव में गुरमति विचारधारा मनुष्य को सज़ा देने के पक्ष में नहीं बल्कि उसकी गल्तियों को सुधारकर उसको आगे से दुरुस्त करने के लिए प्रेरित करती है। श्री गुरु अरजन देव जी मनुष्य को अपने गृह-कुटंब में ज़रूरत से अधिक खचित होने से मना करते हैं। हां! वह अपना गृहस्थी फर्ज़ तो पूरे तन-मन के साथ निभाए परंतु उनके सुख-आराम की खातिर अनैतिक लूट, खसूट, धोखा और बेईमानी, पराया हक आदि से रोकते हैं क्योंकि "नाम" के बिना अंत समय यह सब साथ छोड़ जाते हैं। गुरु वाक्य अनुसार :

पुतु कलत्रु लखिमी दीसै इन महि किछू न संगि लीआ ॥ *(पन्ना ९००)*

अपने गृहस्थ-परिवार के सुख-आराम, ऐशो-इशरत को लोगों की लूट करके धन लाने की वृत्ति से भी संकोच करने के लिए प्रेरित करते हैं। गुरु वाक्य के अनुसार :

बहु परपंच करि पर धनु लिआवै ॥
सुत दारा पहि आनि लुटावै ॥ *(पन्ना ६५६)*

गुरमति फ़लसफ़ा तो दानव को सुधारकर मानव बनाने वाला है। श्री गुरु नानक देव जी "आसा की वार" में इस प्रकार अपने सतिगुरु से बलिहार जाते हैं। गुरु वाक्य के अनुसार :

बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सद वार ॥
जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार ॥ *(पन्ना ४६२)*

श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं :

जैसा बालकु भाइ सुभाई लख अपराध कमावै ॥
करि उपदेसु झिड़के बहु भाती बहुड़ि पिता गलि लावै ॥ *(पन्ना ६२४)*

भक्त कबीर जी प्रभु रूपी माता-पिता के अपने बच्चों के प्रति प्यार, स्नेह और खुलदिली तथा माता-पिता द्वारा अपने बच्चों के घोर अपराधों को माफ कर देने का जिगरा आदि के बारे में बहुत ही भावपूर्वक तरीके से समझाते हैं। प्रश्न उत्पन्न होता है कि जब माता-पिता अपने बच्चों के लिए दरिया-दिल होते हैं तो फिर बच्चों के अंदर उनके प्रति बेरुखी और तंगदिली क्यों पैदा होती है? जब कि सच्चाई यह भी है कि समय आने पर बुढ़ापा उन पर भी आना है और वह उस समय बुढ़ापे की तनहाई में अपने बच्चों से क्या आशा रखते हैं? बस! यही

नुक्ता प्रत्येक नवयुवक बच्चे के लिए समझने की आवश्यकता है। भक्त कबीर जी फरमान करते हैं :

सुतु अपराध करत है जेते ॥
जननी चीति न राखसि तेते ॥
रामईआ हउ बारिकु तेरा ॥
काहे न खंडसि अवगनु मेरा ॥रहाउ॥
जे अति क्रोप करे करि धाइआ ॥
ता भी चीति न राखसि माइआ ॥ (पन्ना ४७८)

भक्त नामदेव जी समझाते हैं कि अगर माता-पिता अपने पुत्र-मोह में आकर उसको अपने धर्म-दीन और सिद्धांत से डोलने को मज़बूर करते हैं भावार्थ गलत रास्ते डालते हैं तो बच्चे अपनी सच्चाई और सिद्क पर दृढ़ रहते हुए ज़रूर अपने माता-पिता से बागी हो सकते हैं। जब बादशाह मुहम्मद तुगलक ने भक्त नामदेव जी को "या धर्म तबदील करो या मौत कबूल" का हुक्म किया तो भक्त जी की माता ने पुत्र-मोह में आकर उसको धर्म त्याग देने की सलाह दी तो भक्त नामदेव जी ने साफ इन्कार कर दिया। उनके सामने सम्पूर्ण जीवों, खंड-ब्रह्मांडों का सृजनहार अकाल पुरख ही सबका सांझा बाप और माता था, फिर वह ऐसी अवज्ञा और पाप क्यों करे? जिस तरह गुरु साहिब अकाल पुरख का गुणगान करते फरमान करते हैं :

-गुरदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा ॥
गुरदेव सखा अगिआन भंजनु गुरदेव बंधिप सहोदरा ॥ (पन्ना २६२)
-तूं साझा साहिबु बापु हमारा ॥ नउ निधि तेरै अखुट भंडारा ॥
जिसु तूं देहि सु त्रिपति अघावै सोइ भगतु तुमारा जीउ ॥ (पन्ना ९७)
-तू मेरा पिता तूहै मेरा माता ॥ तू मेरे जीअ प्रान सुखदाता ॥
तू मेरा ठाकुरु हउ दासु तेरा ॥ तुझ बिनु अवरु वही को मेरा ॥ (पन्ना ११४४)

भक्त नामदेव जी की माता पुत्र-मोह में आकर जब उनको इस्लाम धर्म कबूल करने के लिए प्रेरित करती है तो उस वार्त्तालाप को भक्त जी ने अपनी बाणी में ऐसे अंक्ति किया है :

रुदनु करै नामे की माइ ॥
छोडि रामु की न भजहि खुदाइ ॥
न हउ तेरा पूंगड़ा न तू मेरी माइ ॥
पिंडु पड़ै तउ हरि गुन गाइ ॥ (पन्ना ११६५)

वास्तव में माता-पिता का विशेषत माता का बच्चे के प्रति अथाह मोह-प्यार होना प्राकृतिक बात है। जब भक्त कबीर जी ने बचपन में ही ताना-तनने और कपड़े बुनने में ज्यादा ध्यान न दिया और राम नाम की लिव में ही लीन होने लग पड़े तो उनकी माता को चिंता हुई कि अगर किरत-कमाई नहीं करेगा तो यह क्या खाएगा, ज़िंदा कैसे रह सकेगा? भक्त कबीर जी ने अपने एक शबद द्वारा माता के प्यार और नाम-भक्ति रहस्य को इस प्रकार प्रकट किया है :

मुसि मुसि रोवै कबीर की माई ॥
ए बारिक कैसे जीवहि रघुराई ॥१॥
तनना बुनना सभु तजिओ है कबीर ॥
हरि का नामु लिखि लीओ सरीर ॥१॥ रहाउ ॥
जब लगु तागा बाहउ बेही ॥
तब लगु बिसरै रामु सनेही ॥२॥
ओछी मति मेरी जाति जुलाहा ॥
हरि का नामु लहिओ मै लाहा ॥३॥
कहत कबीर सुनहु मेरी माई ॥
हमरा इन का दाता एकु रघुराई ॥४॥
(पन्ना ५२४)

जब आधुनिक समाज की तरफ दृष्टि डालते हैं एवं समाज में आदर-सम्मान के पात्र सृजनहार माता-पिता को अनावश्यक बोझ समझकर वृद्ध आश्रमों में रुलने, रोने और झूरने के लिए और प्रत्येक पल अपनी मौत के इंतज़ार के लिए

टूटी हुई किसी वस्तु की तरह फेंका जा रहा है। आज ज़रूरत है, इस व्यवहार को समझने की और इस पर काबू पाने की। प्रत्येक पुत्र-पुत्री, बहू एवं बच्चों से यह आशा की जाती है, जो उनकी नैतिक ज़िम्मेदारी भी है कि वह माता-पिता के आज्ञाकारी हो ताकि वह अपने बुजुर्गों की अशीष और आशीर्वाद के सदैव हकदार और पात्र हों। गुर इतिहास ग्वाह है कि श्री गुरु हरिराय साहिब जी के पुत्र रामराय ने गुरु जी की आज्ञा का पालन नहीं किया था और उसने बादशाह के रोहब और तानाशाही व्यवहार से डरते हुए गुरबाणी की पंक्ति "मिटी मुसलमान की" की जगह "मिटी बेईमान की" पढ़ दिया था; जिसके परिणामस्वरूप गुरु साहिब ने उसको पूरी ज़िंदगी माथे लगने से मना कर दिया था और सिक्ख श्रद्धालुओं को उसके मुंह-माथे लगाने से मना कर दिया था। परिणामस्वरूप वह माता-पिता की अशीष से विरक्त होने के कारण सम्पूर्ण आयु भटकता फिरता रहा और अंत उसके ही चेलों ने उसको आग लगाकर मार दिया था। माता-पिता की आज्ञा का पालन न करने के कारण और माता-पिता को अपमानित करने के कारण ही प्रिथी चंद सम्पूर्ण आयु भटकता फिरता रहा और गुरतागद्दी माता-पिता के आज्ञाकारी सुपुत्र श्री गुरु अरजन देव जी को प्राप्त हुई। इस सम्पूर्ण कहानी से हमारी नवयुवक पीढ़ी को सबक लेने की ज़रूरत है कि माता-पिता बुजुर्गों के आशीर्वाद से विरक्त मनुष्य प्रिथी चंद और रामराय की तरह सारी उम्र भटकता व अशांत ही रहता है।

हमारे देश में अन्य अनेकों दिखावे और अडंबरों की तरह प्रत्येक वर्ष (ELDER'S DAY) और (MOTHER'S DAY) भावार्थ 'बुजुर्ग दिवस', 'मां दिवस', 'युवा दिवस', 'नारी दिवस' और 'अध्यापक दिवस' मनाए जाते हैं। यह कार्यक्रम फोके दिखावे वाले आडंबर से अधिक अन्य कुछ भी नहीं होते; क्योंकि इन रिश्तों की महत्ता समझाने के लिए तो एक लहर खड़ी करने की ज़रूरत है। आम तौर पर देखा जाता है कि जिन लोगों द्वारा अपनी मां तथा अपने बुजुर्गों को अपमानित कर घर से निकाला होता है वही लोग ही यह ड्रामा (दिखावा) करने वाले चौधरी होते हैं, ऐसे ड्रामों और ड्रामेबाज़ी का समाज पर कोई प्रभाव नहीं होता बल्कि यह दिखावे वाले कार्यक्रम तो उन रुल रहे बुजुर्गों के साथ एक भद्दा (घिनौना) मज़ाक ही है। गुरबाणी ऐसे लोगों के बारे में ऐसे स्पष्ट करती है :

कूड़ु बोलि मुरदारु खाइ ॥
अवरी नो समझावणि जाइ ॥
मुठा आपि मुहाए साथै ॥
नानक ऐसा आगू जापै ॥ *(पन्ना १३९)*

बाहर से ऐसे लोग मुंह के मीठे, चेहरे सुंदर, ज्ञानवान लगते हैं अपने आप को ऊंचे वंश वाले बताते हैं परंतु उनके अंदर परमात्मा का भाव और भय व माता-पिता के प्रति सच्चा स्नेह, नेकी व परोपकार की भावना नहीं होती और ऐसे लोग तो मुर्दों के समान ही होते हैं। ऐसे लोगों के बारे में गुरबाणी इस प्रकार स्पष्ट करती है :

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत ॥
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥ *(पन्ना २५३)*

पहले पहल शहरों में यतीमखाने होते थे जहां अनाथ बच्चों की परवरिश, शिक्षा एवं सेहत का प्रबंध किया जाता था। इन यतीमखानों में पले और बड़े हुए बच्चों ने समय आने पर बहुत बड़े मुकाम हासिल किए। शहीद ऊधम सिंघ की मिसाल सम्पूर्ण विश्व के सामने है।

परंतु अब यतीमखाने तो कम ही नज़र आ रहे हैं बल्कि असंख्य "वृद्ध आश्रम" अस्तित्व में आ रहे हैं। जहां देश की बहुमूल्य विरासत, हमारे सम्मान के पात्र, बुजुर्ग रुल रहे हैं। अब

व्यवहार अति दुखदायक है। पदार्थवादी, निजप्रस्ति, मतलबप्रस्ति और अत्यंत की खुदगर्ज़ी वाली सोच और सामाजिक कदरों-कीमतों से कोरे हो जाना और अपनी विरासत और सभ्यचार (संस्कृति) को तिलांजली दे देना, सामाजिक शर्म और न्याय से कोरा हो जाना और इसके साथ भी बिजलई (इलेक्ट्रानिक) मीडिए पर जो कुछ नवयुवक पीढ़ी के आगे परोसा जा रहा है; नशे और बेरोज़गारी आदि अनेकों ही कारण इस व्यवहार के लिए ज़िम्मेदार हैं। बेरोज़गारी के कोहड़ से बचने के लिए किरत करने, हाथों से कार कमाना, बांटकर छकना (परोपकार करना) नाम जपने (अकाल पुरख के हमेशा ही भाव और भय में रहना) के लिए प्रेरित करती है ताकि जीवन सुखदाई हो, जिसमें केवल अपने माता-पिता एवं बुजुर्ग ही नहीं बल्कि सब के साथ प्रेम-प्यार, *एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥"* की भावना प्रबल हो। गुरबाणी प्रमाण है :

-सबरु एहु सुआउ जे तूं बंदा दिड़ु करहि ॥
वधि थीवहि दरीआउ टुटि न थीवहि वाहड़ा ॥
(पन्ना १३८४)

-जितु पीतै मति दूरि होइ बरलु पवै विचि आइ ॥
आपणा पराइआ न पछाणई खसमहु धके खाइ ॥
(पन्ना ५५४)

समाज में यहां पुत्र मोह और पुत्र की ख्वाहिश भारू (हावी) है और भ्रूण हत्याओं का बोलबाला है और दहेज प्रथा या पुत्र पैदा न कर सकने के कारण एवं अन्य अनेकों कारणों के कारण बहुओं को जलाया, मारना एवं तलाक देने का घिनौना सिलसिला जारी है। वहां घर में समय आने पर बहुओं के घर-परिवार में हावी हो जाने पर बहु-पुत्र द्वारा अपने नैतिक फर्ज़ों को अनदेखा करते हुए बुजुर्गों को अपमानित ही नहीं किया जाता बल्कि उनको तंग-परेशान कर घर से निकाल दिया जाता है। उस हालत में वह आत्म-हत्या करते हैं अथवा फिर वृद्ध-आश्रम का आश्रय लेते हैं। भाई गुरदास जी समाज की इस त्रासदी से ऐसे पर्दा उठाते हैं :

कामणि कामणिआरीऐ कीतो कामणु कंत पिआरे।
जंमे साईं विसारिआ वीवाहिआं मां पिउ विसारे।
सुखां सुखि विवाहिआ सउणु संजोगु विचारि विचारे।
पुत नूहैं दा मेलु वेखि अंग न मावनि मां पिउ वारे।
नूंहु नित मंत कुमंत दे मां पिउ छडि वडे हतिआरे।
वख होवै पुतु रंनि लै मां पिउ दे उपकारु विसारे।
लोकाचारि हुइ वडे कुचारे। (वार ३७:१२)

भाई गुरदास जी ने इस सामाजिक दुखदायक एवं अनैतिक व्यवहार को बहुत महसूस किया लगता है, जिस त्रासदी से वह पर्दा उठाकर नवयुवक पीढ़ी के अंत:करण तक झिंजोड़कर उनको उनके मानवीय फर्ज़ प्रति सुचेत करते हैं। भाई गुरदास जी अपनी ३७वीं वार की ११वीं पउड़ी में ब्यान करते हैं कि माता-पिता किस तरह अपने बच्चों को बड़े होते देखकर उनकी बड़े चावों-मलारों के साथ शादी करके व घर में पुत्र-बहु का परस्पर प्रेम-प्यार, मिलाप और सद भावना देखकर किस तरह फूले नहीं समाते और उनके उज्ज्वल भविष्य, लंबी आयु और खुशहाली के लिए फरियाद करते हैं व अशीषें देते हैं परंतु वही पुत्र-बहु निरमोहे होकर माता-पिता से धन, दौलत, ज़मीन, संपत्ति प्राप्त कर उनके साथ अपमानजनक व्यवहार करते हैं और उनको वृद्ध आश्रमों में छोड़ आते हैं। भाई गुरदास जी अपनी वार में लिखते हैं :

माता पिता अनंद विचि पुतै दी कुड़माई होई।
रहसी अंग न मावई गावै मोहिलड़े सुख सोई।
विगसी पुत विआहिऐ घोड़ी लावां गाव भलोई।
सुखां सुखै मावड़ी पुतु नूंह दा मेल अलोई।

नुहु नित कंत कुमंतु देइ विहरे होवह ससु विगोई।
लख उपकारु विसारि कै पुत कुपुति चकी उठि झोई।
होवै सरवण विरला कोई। (वार ३७:११)

गुरबाणी और भाई गुरदास जी की वारें सम्पूर्ण समाज को अपना खुशहाल आध्यात्मिक और सांसारिक (सामाजिक) जीवन जीने के लिए प्रेरणा का स्रोत और उच्चत्म जीवन युक्ति है। बस! गुरमति ज्ञान को समझने की ज़रूरत है। उसको अपने जीवन में ढालने की ज़रूरत है। गुरबाणी पदार्थवादी, अमुक तृष्णा और इच्छाओं की चल रही आंधी में लुप्त हुए शिखर दोपहर भी गहरे अंधेरे में विचरण करने वाले और अपने महान विरसे और सभ्याचार से कोरे लोभी व लालची मनुष्यों के बारे ऐसे अफ़सोस प्रकट करती हैं :

-अंधे कै राहि दसिऐ अंधा होइ सु जाइ ॥
होइ सुजाखा नानका सो किउ उझड़ि पाइ ॥
(पन्ना ९५४)

-सो किउ अंधा आखीऐ जि हुकमहु अंधा होइ ॥
नानक हुकमु न बुझई अंधा कहीऐ सोइ ॥
(पन्ना ९५४)

परंतु अच्छाई और सच्चाई का बीज कभी विनाश नहीं होता। जिनके अंदर सच है, सच्चाई है और अपने गौरवमयी विरासत और सभ्याचार के साथ जुड़े हुए हैं वो समाज का आज भी प्रशंसनीय अंश है। यह लोग पदार्थवाद, निजप्रस्ति, मौकाप्रस्ति और मतलबप्रस्ति की चल रही आंधी के दौरान ऐसे जगमगाते चिराग हैं जो अडोल और अहिल रहते हुए अपने बुजुर्गों के सम्मान, प्यार, आज्ञाकारिता और सेवा में लीन है। हमें ऐसे बच्चों पर गर्व है चाहे यह "हैनि विरले नाही घणै" ही हैं, ऐसे बच्चे हमारे उज्ज्वल भविष्य के जामन (मुखी) हैं। गुरबाणी इस प्रकार स्पष्ट करती है कि जिस परिवार में ऐसे आज्ञाकारी-सेवादार, हलीमी, नम्रता स्वभाव वाले बच्चे होंगे वह तो अपने परिवार का "घोर अपयश" अगर कोई हो भी तो धो देते हैं और परिवार का समाज में अच्छा यश पैदा कर देते हैं और उन परिवारों की शोभा जगत में बढ़ती है। गुरबाणी प्रमाण है :

-अपजसं मिटंत सत पुत्रह ॥
सिमरतब्य रिदै गुर मंत्रणह ॥ (पन्ना १३६०)
-जितु ग्रिहि वसै सो ग्रिहु सोभावंता ॥
(पन्ना ३७०)

अधिका अधिक पैसे कमाने के लालच में सम्पूर्ण पंजाब और विशेषत दुआबे से अनेकों ही नवयुवक विदेशों में चले गए हैं। पंजाब में हाथों से किरत करने से प्रहेज करते हुए बाहरले देशों में नीचे के दर्जे पर कार्य करके बहुत पैसे कमाने में लगे हुए हैं। इससे एक तो परिवारों में बिछोड़े पड़े हुए हैं और गृहस्थ जीवन को जीने के स्थान पर इसको अस्त-व्यस्त ही कर दिया गया है। इस व्यवहार का सबसे अधिक शिकार बुजुर्ग माता-पिता हो रहे हैं जो पंजाब में अकेलेपन भरी संकटमयी ज़िंदगी व्यतीत कर रहे हैं और उनका बुढ़ापा नर्क ही बना हुआ है। जो माता-पिता अपने बच्चों के साथ विदेशों में जाते भी हैं वहां पर उनको पंजाब में अकेलेपन वाली ज़िंदगी से भी बदतर ज़िंदगी व्यतीत करने के लिए मज़बूर होना पड़ रहा है। हर हालात में पंजाब का यह सम्मानित बुढ़ापा रुल रहा है। भक्त फरीद जी की उमंग *"फरीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझै न देहि ॥ जे तू एवै रखसी जीउ सरीरहु लेहि ॥"* अपने घर-परिवार, अपने देश में ही किरत कर, जीवन को सुखद और गौरवमयी बनाएं।

दुखदायी और आश्चर्य वाली बात यह है कि माता-पिता ने जिस घर को अपनी जवानी में बनाया, संवारा और श्रृंगारा होता है जब उसी घर में उनके द्वारा ही जन्में, परवरिश

और अच्छे स्थानों पर स्थापित किए बच्चे उनकी तरफ बेरुखी करते हैं, उनको एक अधिक बोझ समझकर अनदेखा ही नहीं करते बल्कि बेइज्ज़त भी करते हैं। गुरु साहिब तो मनुष्य को पहले ही सुचेत करते हैं। गुरबाणी का पावन फरमान है :

-पुत्र कलत्र ग्रिह देखि समग्री इस ही महि उरझाइओ ॥ *(पन्ना १०१७)*

-पुती भातीई जावाई सकी अगहु पिछहु टोलि डिठा लाहिओनु सभना का अभिमानु ॥ *(पन्ना ८५३)*

-इहु कुटंबु सभु जीअ के बंधन भाई भरमि भुला सैंसारा ॥ *(पन्ना ६०२)*

गुरु साहिब उत्तम जीवन युक्ति ऐसे समझाते हैं :

विचे ग्रिह सदा रहै उदासी जिउ कमलु रहै विचि पाणी हे ॥ *(पन्ना १०७०)*

जहां तक पारिवारिक जीवन के दुखदायकता का सम्बंध है, उससे बचने के लिए प्रत्येक मनुष्य को समझने, सोचने एवं व्यवहारिक होने की ज़रूरत है। माता-पिता को भी शुरू से ही अपनी संतान को अच्छे संस्कार देने होंगे। अपना मिसाली जीवन बच्चों के सामने रोल-मॉडल (पथ प्रदर्शक) के रूप में पेश करना होगा, पुत्र-बहु को भी समझना होगा कि एक दिन बुढ़ापा उन पर भी आना है और जैसे व्यवहार और बरताव अपने माता-पिता के साथ कर रहे हैं, उनके बच्चे भी वो सब कुछ देख रहे हैं और उनको भी समय आने पर "जैसी करनी वैसी भरनी" के लिए तैयार रहना होगा। प्रत्येक पुत्री को समझना होगा कि जिस तरह वह अपनी भाभियों को अपने माता-पिता की आज्ञाकारी और सेवादार चाहती है उसी तरह का व्यवहार उनको भी अपने ससुराल घर में जाकर करना होगा। अगर मां को अपनी पुत्री प्यारी है और वह अपनी पुत्री के लिए ससुराल में पूरा मान-सम्मान और आदर चाहते हैं तो उसको भी अपनी बहु को वही प्यार-सम्मान एवं आदर देना होगा। अगर पुत्री को अपनी जननी माता प्यारी है तो पुत्र को अपनी जननी माता उसी तरह ही प्यारी होती है; जिससे बहु उसकी मां के पुत्र को तोड़कर उसकी अपनी माता प्रति मोह भंग करके गलत रास्ते डालकर पारवारिक ज़िंदगी से खिलवाड़ करने से कम नहीं होगा।

इस तरह करने से पारवारिक जीवन, बड़े मुकामों, धन-दौलत, कारों-कोठिओं, ज़मीनों-संपत्तियों के होते हुए भी, कभी खुशहाल, सुखी और व्यतीत करने योग्य नहीं होगा। समाज भी ऐसे व्यवहार को प्रवान ही नहीं करेगा बल्कि दुतकारेगा। इसलिए घर-परिवार में हर एक को पूरी सूझबूझ, आपसी प्रेम-प्यार, आदर-सम्मान, सहनशीलता और सहिहोंद की भावना से जीने की जांच सीखनी होगी। फिर चाहे घर में गरीबी भी हो तो भी जीवन पूरा सुखदायी होगा, खुशहाल, विकसित और सफल सांसारिक जीवन के लिए गुरमति फलसफे में सम्पूर्ण "उच्चत्म जीवन युक्ति" समावेश हुई है जो मानव को दानव होने से ही नहीं बचाती बल्कि मानव के महामानव होने के लिए ठीक और सार्थक मार्ग मुहैया करवाती है। आइए! सतिगुरां के सर्व समाज के खुशहाल जीवन व उद्धार के लिए बख़्शे उपदेश को समझें, धारण करें गुरमति मार्ग के पथिक बने और *"लोक सुखी परलोक सुहेले"* हो जाएं।

श्री मुकतसर साहिब के गुरुद्वारा साहिबान

*-स. सुरिंदर सिंघ निमाणा**

श्री मुकतसर साहिब वह पावन स्थान है जिसको जगह-जगह पर कलगीधर पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पवित्र चरन-कमलों की छोह (स्पर्श) प्राप्त है। गुरु साहिब की अगुआई में समय की ज़ालिम हकूमत के विरुद्ध खालसा फौजों का संघर्ष अपने फैसलाकुन दौर में शामिल हो चुका था। किला अनंदगढ़, श्री अनंदपुर साहिब के मुगल फौजों के कई महीनों तक के लंबे घेरे दौरान जो ४० सिक्ख बेदावा लिखकर, देकर गुरु साहिब का साथ छोड़ आए थे-- श्री मुकतसर साहिब की पावन ऐतिहासिक धरती पर दुश्मन फौजों के साथ बेमिसाल टक्कर लेते हुए, अपनी जानें कुर्बान कर खालसा फौजों की फ़तहि में महत्त्वपूर्ण हिस्सा डालते, उन सिंघों ने अपनी की पीछे की भूल को ही माफ नहीं करवाया बल्कि गुरु महाराज से चालीस मुकतों की बख़्शिश भी हासिल की। चालीस सिंघों की अगुवाई झबाल के रहने वाले माता भागो जी ने की थी। सिंघों को उनकी भूल का एहसास करवाने में भी माता भागो जी का भरपूर हाथ था। चालीस मुकतों के साथ ही माता भागो जी का नाम सिक्ख इतिहास के इस गौरवमयी साके में बहुत ही मान-सम्मान के साथ लिया जाता है। श्री मुकतसर साहिब में घटित युद्ध, गुरु-बख़्शिश और कुछ अन्य यादगारी ऐतिहासिक घटनाओं से सम्बंधित गुरुद्वारों साहिबान के बारे में संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है।

१. गुरुद्वारा टुट्टी गंढी साहिब, श्री मुकतसर साहिब : गुरुद्वारा टुट्टी गंढी साहिब, श्री मुकतसर साहिब के पावन ऐतिहासिक स्थान का बहुत महत्त्व है। यह वह स्थान है यहां माझे के ४० सिंघों ने मुगल फौजों के साथ झूजते हुए शहीदी प्राप्त की। गुरु जी और उनकी खालसा फौजों का पीछा करते विरोधी-दल जैसे ही वहां पहुंचा माता भागो जी की अगुवाई में ४० सिंघ इस पर ऐसे टूट पड़े कि विरोधी दल को भागते देर नहीं लगी चाहे कि ४० के ४० सिंघ जामे-शहादत पी गए। विरोधी दल के मैदान से हट जाने पर युद्ध उपरांत की स्थिति का जायज़ा लेने के लिए दशम पातशाह जैसे ही टिब्बी से नीचे यहां पर आए तो आपजी को इन सिंघों की कुर्बानी का दृश्य अपनी आंखों से देखने को मिला। गुरु पिता को सिंघ शूरवीर अपने सुपुत्रों के समान थे। बेदावा देकर गए पुत्रों की गुरु-घर में वापसी और गुरु की खुशियों के लिए की अद्वितीय कुर्बानी देख गुरु पातशाह जी विस्माद आवेश में आए। शहीद हुए सिंघों को 'इह लोक सुखीए परलोक सुहेले नानक हरि प्रभि आपहि मेले' की भरपूर अशीषें बख़्शिश कीं। तबी गुरु जी ने सोचा कि इन सिंघों का जत्थेदार जो बेदावा देते समय भी आगे था, अभी उसके प्राण (स्वास) चल रहे थे। गुरु जी ने अपने प्यारे सिक्ख का सिर गोद में लेकर प्यार के साथ पलोसा (सहलाया) मेहर को दृष्टि से देखा तो भाई महां सिंघ निहाल-निहाल (गद्द-गद्द) हो गया। पातशाह जी द्वारा मेहरों के घर में आने पर भाई महां सिंघ ने जोदड़ी कर पातशाह जी से बेदावे का वह कागज़ फड़वा कर सभी साथी सिंघों समेत चालीस मुकते होने की महान बख़्शिश भी हासिल की। इसी बख़्शिश का सदका खिदराणे की ढाब

**मुख्य संचालक, ऐवरग्रीन साइंस एण्ड सपोर्टस स्कूल, अच्चल साहिब, बटाला, मो. +९१८८७२७-३५१११*

कहलाती धरती श्री मुकतसर साहिब कहलाई।

४० सिंघों की अगुवाई करते हुए इसी स्थान पर माता भागो जी विरोधी-दल के साथ जूझे और अनेकों दुश्मनों को मार-मुकाने के उपरांत सख़्त घायल हो गए थे। माता भागो जी थोड़े समय में ही गुरु-कृपा सदका स्वस्थ हो गए और इनकी गुरु-घर की सेवा प्रति श्रद्धा देख, गुरु जी ने इनको सिक्खी प्रचार की जिम्मेदारी भी सौंपी। माता भागो जी की याद में गुरुद्वारा माता भागो जी का निर्माण किया गया है।

उपरोक्त युद्ध-स्थल और गुरु जी व भाई महां सिंघ मिलन-स्थान गुरुद्वारा टुट्टी गंढी साहिब, श्री मुकतसर साहिब के नाम से दुनिया भर में प्रसिद्ध हुआ। आज यहां गुरु की संगत ने गुरु जी की और उनके शूरवीर शहीद सिंघों की याद स्मृति को सदीवी रूप में संभालने के लिए एक शानदार गुरुद्वारा साहिब का निर्माण किया है। इस स्थान के निर्माण में गुरु की संगत के साथ-साथ महान सेवा निभाने में समय-समय भाई देसू सिंघ और भाई लाल सिंघ कैथल, महाराजा रणजीत सिंघ के महान सिक्ख जरनैल सरदार हरी सिंघ नलूआ, बाबा गुरमुख सिंघ, बाबा साधू सिंघ कार सेवा वालों और स. करम सिंघ गुरु हरिसहाए (फिरोज़पुर) वालों ने तन-मन-धन सहित विशेष योगदान डाला।

गुरुद्वारा टुट्टी गंढी साहिब, श्री मुकतसर साहिब के सामने दक्षिण की तरफ एक बड़ी अटारी भी मौजूद थी। इसका निर्माण महाराजा हीरा सिंघ नाभा ने टिक्का रिपुदमन सिंघ के जन्म की खुशी के मौके करवाया था।

इन दोनों उपरोक्त स्थानों के नाम बहुत ज़मीन लगी हुई है। गुरुद्वारा टुट्टी गंढी साहिब, श्री मुकतसर साहिब में सम्पूर्ण गुरुपर्व श्रद्धा भावना और उत्साह से मनाये जाते हैं। माघी मुकतसर का जोड़मेला यहां विशेष रूप में मनाया जाता है। हज़ारों की संख्या में सिक्ख संगत और गुरु-घर के श्रद्धालु इस पावन स्थान की धूलि माथे पर लगाकर गुरु जी की खुशियों के पात्र बनते हैं।

२. श्री मुकत सरोवर : यह सरोवर पहले खिदराणे की ढाब कहलाता था। उन दिनों में उस क्षेत्र के, पानी का केवल एक ही स्रोत होने के कारण इस ढाब पर कब्ज़ा करने और इसके पास वाले स्थान को विरोधी-दलों को टक्कर देने के लिए चुनना गुरु जी की कुशल रणनीति का एक ठोस प्रमाण है। अकाल पुरख द्वारा विजय प्राप्त होने में यह ढाब एक माध्यम यां साधन बनी। नगर के स्थान के लिए 'मुकतसर' नामकरण भी इस सरोवर की तरफ संकेत करता है। महाराजा रणजीत सिंघ के दो जरनैल सरदार हरी सिंघ नलूआ और दीवान मुहकम चंद ने इस सरोवर के निर्माण की सेवा अपार धन खर्च कर करवाई। उपरांत महाराजा पटियाला, नाभा, जींद और फरीदकोट की मदद के साथ सिक्ख रेजिमैंट नंबर १४,३५ और ३६ ने परिश्रम कर यह सेवा सम्पूर्ण कर सरोवर को आधुनिक रूप प्रदान किया। जत्थेदार बाबा बघेल सिंघ और बाबा गुरमुख सिंघ, बाबा साधू सिंघ कार सेवा वालों ने डेढ मील लंबी पक्की हंसली बनवाकर सरोवर के जल-निकास और जल भरने की कुशल व्यवस्था सुनिश्चित की है।

३. गुरुद्वारा श्री तंबू साहिब : यह स्थान श्री मुकत सरोवर के दक्षिण पूर्वी किनारे पर स्थित है यहां युद्ध के समय झाड़ और करीरों के झुंड होते थे। रणनीति में गुरु बख़्शी शिक्षा तथा सूझबूझ का सदका खालसा फौजों ने दुश्मन की फौज को अपने सीमित संख्या में होने का पता न लगने देने के पैंतड़े के रूप में इनके ऊपर अपने कपड़े और चादरें तान दिए थे। इस गुरुद्वारा साहिब के निर्माण में सिक्ख संगत के

अलावा महाराजा महिंदर सिंघ पटियाले वालों का योगदान सर्वश्रेष्ठ है।

४. गुरुद्वारा शहीद गंज साहिब : यह वह स्थान है यहां गुरु जी ने इस क्षेत्र के सिक्खों की मदद के साथ ४० शहीद सिंघों का संस्कार किया। यह गुरु-स्थान गुरुद्वारा टुट्टी गंढी श्री मुकतसर साहिब से पश्चिम दिशा की ओर स्थित है। गुरुद्वारा साहिब की इमारत के पास एक छोटा-सा सरोवर भी बनाया गया है। माघी के समय यहां पर हज़ारों की तदाद में सिक्ख संगत पहुंचती है।

५. गुरुद्वारा श्री टिब्बी साहिब : यह गुरुद्वारा साहिब श्री मुकतसर साहिब से डेढ मील पश्चिम दिशा की ओर है। दशमेश पिता जी ने टिब्बी साहिब के स्थान से हाहाकार करते आ रहे विरोधी दल को अपनी कमान से तीर चलाकर रोका। ऊंचा स्थान होने के कारण इसका चुनाव किया गया। इस स्थान के निर्माण की सेवा में सिक्ख संगत के साथ श्री मुकतसर साहिब के पुजारियों जत्थेदार बघेल सिंघ, सोढी माला सिंघ जी श्री अनंदपुर साहिब वालों का विशेष उल्लेख करना बनता है, इस समय शानदार इमारत सौ फुट निशान साहिब सहित दूर से ही शोभा दे रही नज़र आती हैं।

६. गुरुद्वारा रकाबसर साहिब : दशमेश पातशाह जी जब टिब्बी साहिब से उतरकर रण-क्षेत्र की तरफ जाने लगे तो घोड़े की सवारी समय आप जी के पवित्र पांव डालते ही रकाब टूट गई। वह टूटी हुई रकाब गुरु-प्यारी सिक्ख संगत ने ऐतिहासिक स्मृति चिन्ह के रूप में संभाली हुई है। धन्य है गुरु की संगत का आसीम, प्यार जिन्होंने इस स्थान को गुरु-प्रेम भावना के मजीठ रंग में निर्मित किया। इस गुरुद्वारा साहिब के साथ एक पक्के सरोवर का भी निर्माण किया गया है। गुरुद्वारा साहिब के निर्माण में सिक्ख संगत के साथ ही जत्थेदार बघेल सिंघ का योगदान उल्लेखनीय है।

७. गुरुद्वारा तरनतारन साहिब, श्री मुकतसर साहिब : गुरु महाराजा खिदराणे की ढाब (श्री मुकतसर साहिब) से रुपाणे जाते समय इस स्थान पर रुके थे। इस स्थान पर उस समय एक छपड़ी थी। सिक्ख संगत ने उसका सरोवर के रूप में निर्माण किया। गुरु जी के पावन फरमान का सदका संगत और श्रद्धालु-जन सरोवर में स्नान कर दुखों-क्लेशों से मुक्त होते हैं।

८. बोहड़ वाला कूआं : खिदराणे की ढाब के गुरुद्वारा टुट्टी गंढ साहिब के निर्माण समय जल-पूर्ति करने के उद्देश्य से इस ढाब वाले स्थान के पास कूआं लगाने की ज़रूरत महसूस करते हुए यह कूआं निर्मित किया गया। सेवा-संभाल करने वाले सिंघों ने पक्की ईटें १० मील की दूरी से सिर पर लाकर सेवा-सिदक की एक विस्मादी उदाहरण प्रस्तुत की। चूने की सेवा कोटकपूरे द्वारा हुई। प्रसिद्ध पंथक जरनैल अकाली फूला सिंघ ने भी निर्माण कार्य में भरपूर योगदान डाला। इस कुएं का पानी ज्यादा खारा (नमकीन) होने के कारण पीने योग्य नहीं था परंतु निर्माण कार्य में यह उपयोग में लाया गया।

९. श्री कलगीधर निवास--भाई महां सिंघ दीवान हाल : इस स्थान के निर्माण की सेवा में सिक्ख संगत के साथ बाबा गुरमुख सिंघ और बाबा साधू सिंघ कार सेवा वालों की सेवा वर्णनयोग्य है। पूर्व निर्मित स्थान सिक्ख संगत की बढ़ती रौनक के मद्धेनज़र रखते हुए गिराकर भाई महां सिंघ दीवान हाल बहुत शानदार और खुला निर्मित किया गया है। यहां धार्मिक दीवान सजते हैं। संगत प्रभु-यश, गुरु-वडिआई और गुरमति-विचारों का लाभ लेती है।

(शेष पृष्ठ २२ पर)

सामाजिक क्रांति के अग्रदूत भक्त रविदास जी

-बीबी परमजीत कौर*

भगत जना की ऊतम बाणी गावहि अकथ कथा नित निआरी ॥
सफल जनमु भइआ तिन केरा आपि तरे कुल तारी ॥ *(पन्ना ५०७)*

भक्त रविदास जी, भक्त नामदेव जी, भक्त कबीर जी उस युग में हुए जब तथाकथित उच्च वर्ग के शोषण के फलस्वरूप अन्य (निम्न) वर्ग की जनता कराह रही थी। ऐसी दृष्टि-सम्पन्न महान आत्माओं को युग दृष्टा की उपाधि से विभूषित किया जाता है। भारत मूलत: एक धार्मिक देश है और गुरुओं, पीरों, पैगम्बरों, महापुरुषों की जन्म भूमि है परंतु यहां सदैव धर्म की किरणें अलोप करने की कोशिशें होती रही हैं। मध्यकाल में भक्त रविदास जी का जन्म भारत में हुआ। उस समय यह संसार जाति-पाति के भयंकर रोग से पीड़ित और अज्ञानता के अंधकार में डूबा हुआ था। उन्होंने अपने उच्च और सात्विक जीवन व शुभ कार्यों द्वारा सारे संसार को आध्यात्मिकता से प्रकाशित किया। निर्धन, दलित तथा पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए एक मसीहे (पथ प्रदर्शक) के रूप में कार्य निभाने के साथ-साथ भक्त जी ने आध्यात्मिकता के लिए तड़प रही रूहों का एक महान पथ-प्रदर्शक के रूप में नेतृत्व किया। भक्त रविदास जी का जन्म भले ही तथाकथित चमार जाति में हुआ था परंतु प्रभु भक्ति ने उनको उच्च बना दिया और नाम-सिमरन द्वारा वो पवित्र बन गए।

भक्त रविदास जी उन महापुरुषों में से थे जिनका जीवन इस बात की गवाही भरता है कि प्रभु प्राप्ति के लिए किसी तरह के कर्मकांड, भेष धारण, धार्मिक चिन्ह, प्राणयाम द्वारा अनहद नाद बजाना, तीर्थ यात्रा और स्नान, व्रत रखना, पुजारियों को दान देना, शरीर को कष्ट देने वाले तप साधन, मंत्रों के जाप करना आदि की ज़रूरत नहीं, बल्कि हृदय की निर्मलता, श्रद्धा भावना, निडर, सच्चे प्यार की ज़रूरत होती है।

भक्त रविदास जी ने पूर्व-प्रचलित धार्मिक संस्थाओं को पूरी तरह रद्द कर दिया। उन्होंने एक परमात्मा की आराधना का उपदेश दिया। भक्त रविदास जी को अपनी जाति पर न तो कोई अफसोस था और न ही हीन भावना। वे तो पुकार कर कहते हैं :

प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥ *(पन्ना ३४६)*

भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में यह इशारा किया कि जन्म, जाति से न कोई बड़ा है न कोई छोटा। जीव की पहचान उसके कर्मों से होती है। प्रभु की शरण में आने से उसकी जाति-पाति, भेदभाव सब खत्म हो जाते हैं। भक्त रविदास जी अपनी प्रेरणा को सिद्ध करने के लिए सदैव अपवित्र माना जाने वाले वृक्ष ताड़ी का उदाहरण देते हैं। ताड़ी का वृक्ष अपवित्र

Research Scholar, Department of Guru Nanak Sikh Studies, Punjab University Chandigarh, (M) 98766-95506

माना जाता था परंतु उससे कागज़ बनता और जब वे वृक्ष कागज़ रूप में प्रयोग होता है और लोग उस पर भक्ति-ज्ञान की बातें लिखते हैं तो वह पूज्य बन जाता है। उसे नमस्कार किया जाता है। ऐसे ही सम्पूर्ण मनुष्य अपना कार्य करते हुए अपने मन में प्रभु के नाम-सिमरन में रंग कर भवसागर से पार हो सकते हैं।

भक्त रविदास जी अपनी नित्यप्रति ज़िंदगी में अंत तक 'किरत' के साथ जुड़े रहे थे। श्रेणी गत मूल्यों वाले समाज को अपनी शुचिता और सत्यता के साथ ऐसी चुनौती दी कि कुलीन वर्ग को उनके वचनों का अनुकरण करना ही पड़ा। भक्त रविदास जी की बाणी में से इस धारणा की पुष्टि भी होती है :

मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता
नितहि बानारसी आस पासा ॥
अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति
तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥
(पन्ना १२९३)

इन पंक्तियों से यह संकेत मिलता है कि भक्त रविदास जी ने कुलीन वर्ग को मात्र चुनौती ही नहीं दी अपितु अपनी कथनी एवं करनी द्वारा लोक वर्ग में एक ऐसी चेतना उत्पन्न की कि उनमें से श्रेणिक समाज का भय जाता रहा। भयमुक्त हुआ मनुष्य ही अपनी भीतरी संभावनाओं को उजागर कर सकता है। जब यह माना गया है कि मध्य कालीन चेतना में से एक ऐसे मनुष्य का उदय हुआ जो जन्म, जाति के बंधनों से ऊपर उठ गया था तो ऐसे मानव के दर्शन भक्त रविदास जी की बाणी में से हो रहे हैं। यह मानव किसी श्रेणिक बंधन से बंधा हुआ नहीं। इसके भीतर तो एक निरंकार की ऐसी ज्योति है जो उसे श्रेणी गत सीमाओं से पार ले जाती है। निरंकार की ज्योति और मानव का अपना शुभ अमल ही एक ऐसी मूल शक्ति बनते हैं जो उसे और उसकी कुल को मुक्त करवाते हैं। यह वह मनुष्य है जिससे अपनी आंतरिक शक्तियों को पावन दिशा दी है। इस मानवीय मूल ने ही अंतत भक्त का दर्जा प्राप्त कर लेना होता है। भक्त रविदास जी की बाणी का यह प्रमाण हमारे इस विचार की पुष्टि करेगा कि जब मनुष्य अपनी आंतरिक ज्योति को पहचान कर शुभ कर्म करता है तो वह भक्त का पद प्राप्त करता है।

जिह कुल साधु बैसनौ होइ ॥
बरन अबरन रंकु नही ईसुरु बिमल बासु जानीऐ जगि सोइ ॥१॥ रहाउ ॥
ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥१॥ . . .
पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ ॥
जैसे पुरैन पात रहै जल समीप भनि रविदास जनमे जगि ओइ ॥ *(पन्ना ८५८)*

स्पष्ट है कि भक्त वही है जो कर्म और ज्ञान की शक्ति द्वारा पारगामी स्थिति प्राप्त कर लेता है। जन्म, जाति, धर्म और श्रेणी गत बंधनों से पार चला गया है। वास्तव में भक्त ज़िंदगी का त्याग कदाचित नहीं करता अपितु ज़िंदगी को जीने योग्य बनाता है। भक्त रविदास जी की बाणी बार-बार 'मनुष्य जन्म' के दुर्लभ होने का संदेश देकर मनुष्य को उस कर्म का ज्ञान देती है जो विचार में से दिशा प्राप्त करता है। इस दिशा ने ही करनी और कथनी को एक रूप करना है। भक्त रविदास जी की बाणी में से जिस मनुष्य का बिम्ब दृष्टयमान हुआ है

वह कथनी और करनी का सूरा है, जन्म जाति और श्रेणी गत बंधनों से ऊंचा है। स्वयं भी मुक्त होने की ओर अग्रसर होता है और दूसरों को भी मुक्त करवाता है। ऐसा मानव प्रतिपल परमात्मा में एक रस है। इस मानव में कोई हीन भाव या भय का लेश भी नहीं है, भेदभाव को चुनौती देकर यह मानव भक्ति की चरम सीमा तक पहुंचता है।

भक्त रविदास जी कहते हैं कि *"मेरा मुझ में कुछ नहीं"* तुम्हीं जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति दिलाने वाले हो। सब जीव तुम्हारी शरण में आए हैं, कृपा करो और उनके काम संवारो। हे परमात्मा! जो भी तेरी शरण में आ जाता है, वह अपने पापों के बोझ से मुक्त हो जाता है :

दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी ॥
असट दसा सिधि कर तलै सभ क्रिपा तुमारी ॥१॥
तू जानत मै किछु नही भव खंडन राम ॥
सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम ॥१॥रहाउ॥
जो तेरी सरनागता तिन नाही भारु ॥
ऊच नीच तुम ते तरे आलजु संसारु ॥
(पन्ना ८५८)

भक्त रविदास जी सफल गृहस्थ जीवन यापन करने वाले, नेक कमाई करने वाले तथा समाज को सच्ची किरत करने के लिए प्रेरणा देने वाले प्रेम-मूर्ति महापुरष थे, वे सत्य के हितैषी, नम्रता के पुंज, दयालु, करुणशील, परोपकारी, सेवा, सिमरन धारण करने वाले और हर तरह के मिथ्या रीति-रिवाज़ों वहमों, भ्रमों का खंडन करने वाले कर्मयोगी थे। यदि उनकी बाणी को सही संदर्भ में विचार कर पेश करने का प्रयत्न किया जाए तो उनकी बाणी आज के नव समाज की सृजना हेतु भी कल्याणकारी सिद्ध होगी और जीवन के हर पहलू में सही मार्ग दर्शन करने वाली होगी। ☸

श्री मुकतसर साहिब के गुरुद्वारा साहिबान

(पृष्ठ १९ का शेष)

१०. गुरुद्वारा दातनसर साहिब : यह गुरुद्वारा साहिब, गुरुद्वारा टुट्टी गंढी साहिब से लगभग दो कदम की तरफ स्थित है। गुरु जी के खिदराणे से टिब्बी साहिब पधारने के समय सुबह-सुबह इस स्थान पर गुरु पातशाह जी ने दातुन की थी। इस गुरुद्वारा साहिब के निर्माण में सिक्ख संगत के साथ भाई शेर सिंघ जी का भरपूर योगदान है। एक छोटा प्रकाश स्थान और एक सरोवर भी है।

इस पावन स्थान के पास ही एक मुगल की बुरी याद दिलाती एक कब्र भी है। इस स्थान पर यह मुगल भेस बदलकर गुरु जी पर जान-लेवा वार करने के मंद इरादे से आया था। गुरु जी के हाथों गड़वे की कारगर चोट खाकर उसी स्थान पर दुनिया से उठ गया। सिक्ख यात्री अपनी मनोस्थिति का प्रकटावा इस कब्र को जूते मारकर करते देखे जा सकते हैं। यह ऐतिहासिक और पावन गुर-स्थान गुरु जी और उसकी खालसा फौजों के कारनामे को हमें सदैव ही याद करवाते रहेंगे।

सहायक पुस्तकें

१. इतिहास गुरुद्वारा श्री मुकतसर साहिब, लेखक स. शमशेर सिंघ अशोक; प्रकाशक- शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर।
२. 'सो थानु सुहावा', लेखक स. रूप सिंघ, प्रकाशक- सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर।

बाबा बुड्ढा जी

*–सिमरजीत सिंघ**

गुरु-काल में अनेक सच्चे, सुहृदय सिक्ख हुए हैं, जिनका ज़िक्र बहुत ही फख्र से किया जाता है। सिक्ख धर्म को इसके प्रवर्त्तक श्री गुरु नानक देव जी ने जहां रूहानी गुणों की महकों से भरपूर पटारी के रूप में समस्त जनमानस के समूचे कल्याण हेतु प्रस्तुत किया, वहीं गुरु जी द्वारा स्थापित सिक्ख धर्म में अति ठोस नैतिकचार, व्यक्तिगत आचरण व सदाचार की भी एक कसौटी निर्धारित की गई। गुरु जी ने रूहानियत को सामाजिक दायरे में कमाने हेतु उस समय की जनमानस की आदर्श अगुवाई की। उन्होंने स्पष्ट किया कि गृहस्थ मार्ग से ऊंचा-सुच्चा अन्य कोई धर्म नहीं। गुरु जी ने धर्म को कर्मकांडी पूजा, अर्चना से विभिन्न, संसार रूपी धर्म-स्थान में नाम-जपना, वंड (बांटकर) छकना व किरत करना धर्म की व्यवहारिक परिभाषा के रूप में प्रदान कर लागू भी की। गुरु जी ने समस्त जनमानस के समक्ष जहां आदर्श व्यक्तिगत जीवन की विस्मादी उदाहरण रखी, वहीं सिक्खी सिद्धांतों के अमली मनुष्यों की सृजना की। जो मनुष्य गुरु जी की सिक्खी की कसौटी पर खरे उतरे वो वास्तव में गुरसिक्ख व गुरमुख कहलाए। सिक्ख इतिहास में व समूचे गुरु-काल में बाबा बुड्ढा जी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बाबा बुड्ढा जी ने गुरु-उपदेश को एक शताब्दी से भी ज्यादा समय तक कमाकर गुरु-घर में महत्त्वपूर्ण रुतबा हासिल किया।

सिक्ख इतिहास की महान शख़्सियत बाबा बुड्ढा जी का जन्म ७ कार्तिक संवत् १५६३ (१५०६ ई) को भाई सुग्घा (रंधावा) जी के घर माता गौरां जी की कोख से गांव कत्थूनंगल, ज़िला श्री अमृतसर में हुआ। माता-पिता जी ने आप जी का नाम 'बूड़ा' रखा था। १५१८ ई में श्री गुरु नानक देव जी का परम सेवक बनकर सिक्खी में शामिल हो गया। बाबा बुड्ढा जी सिक्ख इतिहास में ऐसी महान शख़्सियत हैं, जिनको सिक्खों के प्रथम छः गुरु साहिबान की संगत का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। बाबा बुड्ढा जी बचपन में ही श्री गुरु नानक साहिब की संगत में आकर गुरु-कृपा के पात्र बने तथा श्री गुरु अंगद देव जी से लेकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी तक गुरु साहिबान को गद्दी पर विराजमान होने की रस्में निभाने का शुभ कार्य करते रहे एवं इनके अकाल चलाना कर जाने के बाद भी यह सौभाग्य आप जी के उत्तराधिकारियों को प्राप्त हुआ।

कत्थूनंगल, श्री अमृतसर से बटाले को जाते, रास्ते में श्री अमृतसर से २० किलोमीटर तथा बटाला से १८ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। कत्थूनंगल का पुराना नाम गग्गोनंगल था। गग्गो बाबा बुड्ढा जी के दादा जी का नाम था। गग्गो के पिता जी का नाम राजा दल था, जिन्होंने चविंडा देवी गांव बसाया था। प्राचीन काल से चली आ रही कथा के अनुसार यह वो स्थान है, जहां सुरों व असुरों का भयंकर युद्ध हुआ था। इस स्थान पर देवी ने चंड व मुंड शक्तिशाली राक्षसों का वध किया था, जिसके कारण इस जगह का नाम चमुंडा देवी

*संपादक, 'गुरमति ज्ञान' एवं 'गुरमति प्रकाश'।

पड़ गया तथा आजकल इसको चविंडा देवी कहा जाता है। इस जगह पर ऊंचे वीरान थेह (टीला) थे। जब राजा दल ने यह नगर बसाया तो सबसे पहले चविंडा देवी का मंदिर बनाया तथा बटाला के ब्राह्मण से इस देवी की प्रतिमा लाकर इस स्थान पर स्थापित की। जिस स्थान पर ब्राह्मण तथा राजा दल का मिलन हुआ वह स्थान घसीटपुरा (बटाला) है, जहां अब भी कुआं व पीपल का एक वृक्ष है। राजा दल के पिता पोपट ने बटाला बसाया था तथा इसके पुत्र गग्गो ने चविंडा देवी से तीन किलोमीटर की दूरी पर शाही सड़क के बाएं हाथ गग्गोनंगल गांव बसाया तथा यहां ही एक किला बनवाया, जिसके चारों कोनों पर चार गोल मीनार थे व अंदर एक कुआं था।

गग्गो की दो पत्नियां थीं-- निहाली व भागां। निहाली के पांच पुत्र तथा भागां के तीन पुत्र थे। आजकल भी गांव की दो पत्तियां निहाली व भागां के नाम पर हैं। श्री गग्गो २२ गांवों का मालिक था, अब भी चविंडा देवी को 'बाईवास चविंडा' कहा जाता है। गग्गोनंगल के किले के सामने थोड़ी दूरी पर गग्गो का अंतिम संस्कार किया गया तथा समाध के रूप में पुरानी रीति के अनुसार आठ-कोनों वाला थड़ा (चबूतरा) बना दिया गया। यह वही स्थान है जहां श्री गुरु नानक देव जी का बाबा बुड्ढा जी से पहली बार १५१९ ई में मिलाप हुआ था। उस समय बाबा जी की उम्र ११-१२ वर्ष की थी तथा यह अपने दादा गग्गो की समाध के नज़दीक परमात्मा के ध्यान में बैठ जाया करते थे। जब बूड़ा जी का श्री गुरु नानक देव जी के साथ मिलाप हुआ तो बालक ने गुरु जी को माथा टेका व कहा कि मेरा उद्धार करो। गुरु जी ने बालक को पूछा कि तुम्हें क्या दुख है? बालक ने बताया कि हमारे गांव पर मुगलों ने आक्रमण कर दिया था; उन्होंने सब कच्ची-पक्की फसलें काट लीं, तो मेरे मन में एक विचार है कि अगर इन ज़ालिमों का हाथ किसी ने भी डर के मारे नहीं पकड़ा तो उस यम का हाथ पकड़ने वाला कौन है? गुरु जी ने बालक की बातें सुनकर कहा कि तेरी बुद्धि तो बुजुर्गों वाली है अर्थात् तेरे विचार तो उच्चकोटि के हैं। गुरु जी ने बालक को नाम-सिमरन करने का उपदेश दिया तथा उस दिन से आप जी का नाम 'बूड़ा' से 'बुड्ढा' पड़ गया। गुरु जी बालक बुड्ढा जी के साथ भाई सुग्घा जी के किले में गए, जहां माता गौरां जी ने आप जी की बहुत सेवा की। 'छजरा नसब कैफ़िअत थेह मौजय कत्थूनंगल' १८६५ ई में लिखा है :

"मुस्समी गग्गो कौम जट्ट गोत रंधावा मरूस ने चविंडा से उठकर जंगल वीरान को बा-इजाज़्त अपने नाम पर गग्गोनंगल रखा, चंद मुदात यही नाम मशहूर रहा, मगर अहदे बादशाही के मुस्समी कत्थूशाह बेटा मरूस आहला शहर दिहली में मामला अदा किया करता था, उस अयाम से गाओं का नाम कत्थूनंगल मशहूर हुआ। ३३८ वर्ष उस जगह कदीम पर आबाद रहा, ११२ वर्ष हुए किलत आबादी, मारधाड़ सिक्खों, इनके दूसरी जगह मलकों ने आबादी जदीद कायम कर ली, तब से आज तक वहां आबादी कभी वीरान नहीं हुआ और एक थेह पुराना मलकियत शामलाट थेह दरमियान रक्बा देह रजा के वाकिया है।"

इसी 'छजरा कैफिअत नामे' में आगे गग्गो की स्त्रियों व पुत्रों के जायदाद विभाजन के बारे में ज़िक्र किया गया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि 'गग्गोनंगल' से 'कत्थूनंगल' नाम कैसे पड़ा।

श्री गुरु नानक देव जी उस समय करतारपुर नगर बसाकर वहां पर किरत करो,

नाम जपो व वंड छको का उपदेश देकर दुनिया का उद्धार कर रहे थे। भाई अजित्ता (रंधावा) जी को जब श्री गुरु नानक देव जी ने गांव बसाने की तज़वीज़ की तो गांव के लोगों ने अपनी ज़मीनें उसके हवाले कर दीं। गुरु जी ने 'गरीब का मुंह गुरु की गोलक' का उपदेश संगत को दिया। क्रोड़ी नामक चौधरी ने पहले तो कोशिश की कि करतारपुर नगर न बसे परंतु जब गुरु जी के दर्शन किए तो १०० बीघे ज़मीन नगर के नाम पर कर दी। भाई दुनी चंद तथा अन्य कितने ही श्रद्धालु सिक्ख आकर करतारपुर बस गए। बाबा बुड्ढा जी घर का कामकाज निपटाकर प्रतिदिन गुरु जी के दरबार में हाज़िरी भरते व आई हुई संगत की सेवा करते। श्री गुरु नानक देव जी बाबा जी को बहुत प्यार करते थे। बाबा जी ने 'लंडे' तथा 'टाकरी' भाषा अपने पिता जी से सीखी थी तथा श्री गुरु नानक देव जी के दरबार में आकर गुरु साहिब से गुरमुखी का ज्ञान भी प्राप्त किया। गुरु जी के हुक्म के अनुसार आप गुरु जी की बाणी तथा भक्तों की बाणी पढ़ते। इस तरह आप जी को बहुत सारी बाणी कंठस्थ हो गई थी।

जब बाबा बुड्ढा जी की आयु सत्रह वर्ष की हुई तो आप जी के माता-पिता ने आप की शादी अच्चल गांव के निवासी बीबी मिरोआ जी से पूर्ण गुरु-मर्यादा से की। आप जी के विवाह में गुरु जी का परिवार भी शामिल हुआ। आप जी के घर चार सुपुत्रों-- भाई सुधारी जी, भाई भिखारी जी, भाई महिमू जी तथा भाई भाना जी ने जन्म लिया।

कुछ समय बाद बाबा बुड्ढा जी के पिता भाई सुग्घा जी अकाल चलाना कर गए। उनका अंतिम संस्कार करके आप जी अभी सगे-सम्बंधियों के साथ घर पहुंचे तो बाबा जी के माता गौरां जी भी अकाल चलाना कर गए। उन दिनों मृतक के अंतिम समागमों में बहुत वहम-भ्रम तथा कर्मकांड किए जाते थे किंतु बाबा बुड्ढा जी ने अपने मृतक माता-पिता के सम्बंध में गुरमति की छत्रछाया तले सब कर्मकांडों को ठुकराकर पूर्ण गुरसिक्ख होने का सबूत दिया। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने पावन कर कमलों से आप जी के सिर पर दसतार सजाकर आपजी को परिवार की ज़िम्मेदारी संभालने का तथा समाज में गुरसिक्खी का प्रचार करते हुए प्रत्येक के सुख-दुख में शामिल होने का उपदेश दिया। बाबा बुड्ढा जी माता-पिता के अकाल चलाना कर जाने के बाद परिवार की सभी जिम्मेवारियां बाखूबी निभाते हुए किरत करते हुए गृहस्थ धर्म का पालन करते रहे।

श्री गुरु नानक देव जी ने उत्तराधिकारी का चुनाव करना था तथा अपनी ज्योति भाई लहिणा जी में परिर्वतित करनी थी तो उन्होंने भाई लहिणा जी को तख़्त पर बैठाया तथा गुरगद्दी की रस्म अदा करने के लिए बाबा बुड्ढा जी को कहा। जून, १५३९ ई में अपना अंग (शरीर) जान भाई लहिणा जी को श्री गुरु अंगद देव जी बना दिया, जिसका ज़िक्र ज्ञानी ज्ञान सिंघ 'पंथ प्रकाश' में करते हैं :

जदपि सेवक सिख थे औरैं।
स्री बुड्ढै लौ अन कै गौरैं।

श्री गुरु अंगद देव जी गुरिआई प्राप्त करके श्री गुरु नानक देव जी के हुक्मानुसार खडूर साहिब आ गए। खडूर साहिब आकर उन्होंने नयी धर्मशाल स्थापित की। श्री गुरु अंगद देव जी गुरगद्दी के झगड़े के कारण माता भिराई जी के पास गुप्तवास हो गए। संगत गुरु दर्शनों को प्रबल हो उठी। माता भिराई जी के द्वारा बाबा बुड्ढा जी ने गुरु जी का गुप्त स्थान

ढूंढ लिया। बाबा बुड्ढा जी ने भाई बलवंड जी को कीर्तन करने को कहा। श्री गुरु नानक देव जी की इलाही बाणी का कीर्तन सुनकर श्री गुरु अंगद देव जी बाहर आ गए। संगत बाबा बुड्ढा जी की अगुवाई में गुरु-दर्शन करके तृप्त हो गई। श्री गुरु नानक देव जी के यादगारी स्थान करतारपुर की तरफ रावी दरिया का रुख होने से, हर वर्ष बाढ़ आ जाने के कारण नगर पानी की लपेट में आ जाता था। श्री गुरु नानक देव जी के ज्योति जोत समा जाने के बाद बाबा श्री चंद जी तथा बाबा लखमी दास जी ने श्री गुरु नानक देव जी के नाम पर एक यादगारी नगर बसाने की योजना बनाई। इस कार्य के लिए बाबा श्री चंद जी ने गुरु साहिब के प्यारे सिक्ख भाई कमलिया जी को बाबा बुड्ढा जी के घर भेजकर नया नगर बसाने की योजना के बारे में अवगत करवाया। बाबा बुड्ढा जी ने रावी दरिया पार एक ऊंचे व रमणीक स्थान पर श्री गुरु नानक देव जी की याद में 'डेरा बाबा नानक' नामक नगर का शिलान्यास किया।

श्री गुरु अंगद देव जी गुरमुखी को अन्य भाषाओं से टकसाली रूप जानकर उसका प्रचार संगत में करना चाहते थे। इस कार्य के लिए उन्होंने बाबा बुड्ढा जी की जिम्मेदारी लगाई तथा बाबा जी ने संगत को गुरमुखी पढ़ाने की सेवा का कार्य बाखूबी निभाया एवं इसके लिए पाठशाला भी खोली।

खडूर साहिब में एक शिवनाथ नामक तपा रहता था, जो तंत्र-मंत्रों का भय देकर भली मानस जनता को लूटता रहता था। श्री गुरु अंगद देव जी के प्रचार सदका तपे के भ्रमजाल से संगत सुचेत हो गई थी। एक बार बरसात के माह में बरसात नहीं थी हो रही, जिस कारण फसलें सूख रही थीं। कुछ अंध विश्वासी लोगों ने तपे के आगे बरसात करवाने की विनती की तो उसने लोगों को गुरु जी के विरुद्ध भड़काकर कहा कि गुरु जी को गांव से बाहर निकाल देना चाहिए तबी बरसात होगी। जब गुरु जी को इस बात का पता चला तो वो खुद गांव छोड़कर चले गए। जब गुरु जी के गांव से जाने के काफी दिन बाद भी बरसात न हुई तो लोगों को अपनी भूल का एहसास हुआ तो वो बाबा बुड्ढा जी को साथ लेकर गुरु जी को ढूंढकर उनकी हजूरी में हाज़िर होकर गुरु जी से क्षमा मांगकर उनको वापिस ले आए।

'गोइंदे' नाम का एक क्षत्रिय था, जिसकी ज़मीन ब्यास दरिया के किनारे से लगती थी। वह इस स्थान पर नगर बसाना चाहता था। वह दिन में जो भी निर्माण करता था, उसके प्रतिद्वंदी रात को उसको तबाह कर देते थे तथा शोर मचाते थे कि यह किसी भूत-प्रेत ने किया है; वहमों-भ्रमों का शिकार हुआ गोइंदा खडूर साहिब श्री गुरु अंगद देव जी की शरण में आया। गुरु जी ने गोइंदे द्वारा बताई जगह पर श्री (गुरु) अमरदास जी को नगर बसाने का हुक्म किया। श्री (गुरु) अमरदास जी ने बाबा बुड्ढा जी आदि सिक्खों को भाई गोइंदे के साथ लेकर सन् १५४६ ई में गोइंदवाल साहिब नगर बसाया बाबा बुड्ढा जी कुछ समय गोइंदवाल साहिब गुरु-दरबार में रहकर सेवा करते रहे।

बाबा बुड्ढा जी के सबसे छोटे सुपुत्र भाई भाना जी ने एक खूबसूरत नगर बसाया, जिसका नाम 'भाना तलवंडी' रखा गया। बाबा बुड्ढा जी ने संगत की मांग पर इस नगर में एक कुआं खुदवाया तथा ईटें तैयार करवाकर कुएं को पक्का करवाया; यह कुआं 'बाबा बुड्ढा जी का कुआं' के नाम से मशहूर है।

श्री गुरु अंगद देव जी ने अपना अंतिम समय नज़दीक जानकर गुरगद्दी की जिम्मेदारी,

सेवा व सिमरन के पुंज श्री गुरु अमरदास जी को सौंप दी। श्री गुरु अंगद देव जी २९ मार्च, १५५२ ई में ज्योति जोत समा गए। जब श्री गुरु अंगद देव जी ने अपने उत्तराधिकारी श्री गुरु अमरदास जी को गुरिआई दी तो पुराने धैर्यवान सिक्ख भी श्री गुरु अमरदास जी के साथ थे। बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु अमरदास जी को गुरगद्दी पर विराजमान करने की रस्म अदा की। बाबा दातू जी ने गुरु जी का अपमान किया, जिसको बाबा बुड्ढा जी सहन न कर सके। उन्होंने संगत को समझाया कि गद्दी के असली हकदार श्री गुरु अमरदास जी हैं। इनको गुरगद्दी श्री गुरु अंगद देव जी ने अपने हाथों से सौंपी तथा गुरु-घर के इस अनन्य सेवक ने गुरु साहिब के आदेश के अनुसार अपने हाथों से तिलक लगाया। श्री गुरु अमरदास जी ने गुरु-हुक्म के अनुसार गोइंदवाल साहिब को सिक्खी का प्रचार व प्रसार केंद्र बनाया।

गुरगद्दी पर विरासती हक जताते हुए बाबा दातू जी ने गुरु जी से झगड़ा जारी रखा। गुरु जी गोइंदवाल साहिब छोड़कर बासरके आ गए तथा एक कमरे में बाहर से दरवाज़ा बंद करवाकर भक्ति करने लग गए। गोइंदवाल साहिब की संगत गुरु जी के दर्शनों के लिए आती परंतु गुरु दर्शनों के बिना व्याकुल हो जाती। संगत ने बाबा बुड्ढा जी को निवेदन किया। बाबा जी ने संगत की विनती को मानते हुए संगत सहित बासरका की ओर चल दिए। बाबा जी संगत की दर्शनों की इच्छा को तृप्त करना चाहते थे तथा गुरु जी के हुक्म की भी अवज्ञा नहीं करना चाहते थे। बाबा जी ने कमरे की पीछे वाली दीवार को सेंध लगाकर गुरु जी के दर्शन कर तृप्ति की तथा अपनी गलती की क्षमा जाचना की। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी को कहा कि आपने हमारे हुक्म की उलंघना की है। बाबा बुड्ढा जी ने हाथ जोड़कर विनती की महाराज सेवक ने आप जी के हुक्म की उलंघना नहीं की। देख लें! दरवाज़ा बंद है। सेवक तो दीवार को सेंध लगाकर अंदर आया है। गुरु जी बाबा जी की सूक्ष्म दृष्टि व सियानप से बहुत प्रभावित हुए। बाबा जी संगत के साथ दर्शन कर गोइंदवाल साहिब वापिस आ गए।

बाबा जी को गुरु-घर से बहुत प्यार था। वह सिक्खी को ठेस (हानि) पहुंचाने वालों से बहुत सख़्ती से पेश आते थे। गोइंदवाल साहिब आकर श्री गुरु अमरदास जी ने गुरु-मर्यादा को पुन: सुरजीत किया। उन्होंने अनुभव किया कि इतने प्रयत्न करने के बावजूद भी सुच भिट (छूआछूत) का ख़्याल लोगों के मनों से पूरी तरह नहीं गया। उन्होंने इसके सदैवकालीन हल के लिए बाउली (बावली) बनवानी चाही, जिसका जल लेने के लिए हर जीव को सीढ़ियों द्वारा नीचे उतरना पड़े। प्रत्येक क्षेत्र का मनुष्य स्नान कर, भेदभाव रूपी चौरासी से मुक्त हो सके। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी से ही वैसाखी वाले दिन बाउली का फावड़े से टक्क लगवाया। इस पावन कार्य की देखरेख की जिम्मेदारी भी बाबा बुड्ढा जी को सौंपी गई तथा इसको सम्पूर्ण होने में छ: वर्ष लगे।

सिक्खी का बढ़ता प्रसार देखकर श्री गुरु अमरदास जी ने सिक्खी के प्रचार क्षेत्र को नियमबद्ध करने के लिए २२ मंजियों की स्थापना की। इस मंजी प्रथा के मुख्य संस्थापक बाबा बुड्ढा जी ही थे। जब अकबर बादशाह पहली बार श्री गुरु अमरदास जी के दर्शनों के लिए हाज़िर हुआ तो बाबा बुड्ढा जी ने ही बादशाह को इस 'निर्मल पंथ' के बारे में जानकारी दी, जिस पर अकबर बादशाह ने गुरु के लंगर में बैठकर प्रशादा छका तथा गुरु जी

के दर्शन कर बहुत प्रभावित हुआ। जाते समय तीन गांव बीबी भानी जी के नाम पर लगा गया तथा जब तक ज़िंदा रहा, हर वर्ष वैसाखी के अवसर पर एक लाख पच्चीस हज़ार रुपए भेटा के रूप में भेजता रहा। मिले हुए गांवों की जगह पर बाबा जी ने 'गुरु की रक्ख' बनाई जहां पक्षी व पशु घूमते-फिरते थे। एक सुंदर बाग भी बाबा जी ने बनवाया, दुधारू पशु भी वहां रखे, जिनका दूध हर रोज़ गुरु के लंगर हेतु जाता था।

श्री गुरु अमरदास जी ने गुरु-घर की मर्यादा के अनुसार गुरगद्दी के योग्य अधिकारी भाई जेठा जी को गुरगद्दी पर विराजमान कर, बाबा बुड्ढा जी से गुरिआई की रस्म अदा करवाई तथा चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी बनाया। कुछ समय बाद श्री गुरु अमरदास जी सन् १५७४ ई में ज्योति जोत समा गए। बाबा बुड्ढा जी ने गुरु जी के ज्योति जोत समाने के समय सारी रीतियां अपने हाथों से कीं। बाबा मोहरी जी तो सम्मुख हुए किंतु बाबा मोहन जी ने बहुत रोष मनाया।

श्री अमृतसर के लिए भी बाबा बुड्ढा जी ने बहुत सेवा की। श्री गुरु रामदास जी ने श्री गुरु अमरदास जी की आज्ञा मानकर संवत् १६२७ को सरोवर का टक्क लगाया। जिसको 'संतोख सर' कहा जाता है तथा साथ ही 'गुरु का चक्क' नगर की सेवा भी बाबा बुड्ढा जी खुद करवाते रहे। श्री गुरु रामदास जी ने संवत् १६३४ को एक और बड़े सरोवर की खुदाई शुरू की, जिसका नाम 'अमृत सर' प्रसिद्ध हुआ। गुरु साहिब ने अपने पवित्र कर-कमलों से दुक्ख भंजनी बेरी के पास टक्क लगाया। बाबा बुड्ढा इस महत कार्य की सेवा हेतु एक बेर के वृक्ष (बाबा बुड्ढा जी की बेर) तले बैठकर संगत को टोकरियां व फावड़े दिया करते थे। श्री गुरु अरजन देव जी ने इस सरोवर में 'श्री हरिमंदर साहिब' का शिलान्यास किया। श्री हरिमंदर साहिब की सेवा भी बाबा बुड्ढा जी से श्री गुरु अरजन देव जी ने अपनी निगरानी तले करवाई थी।

श्री गुरु रामदास जी अपने तीनों पुत्रों बाबा प्रिथी चंद, बाबा महादेव तथा श्री (गुरु) अरजन देव जी की तरफ देख रहे थे। बाबा बुड्ढा जी की दीर्घ दृष्टि से भी तीनों दूर नहीं थे। श्री गुरु रामदास जी ने गुरगद्दी देने के लिए बाबा बुड्ढा जी से सलाह ली। बाबा बुड्ढा जी की सलाह पर उन्होंने अपने छोटे सुपुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरगद्दी की जिम्मेदारी सौंपी। बाबा बुड्ढा जी से गुरिआई की रस्में करवाकर आप प्रभु-चरणों में जा विराजमान हुए। श्री गुरु अरजन साहिब ने बाबा बुड्ढा जी को समूचे निर्माण के कार्यों का प्रबंध संभाल दिया। प्रिथी चंद ने गुरगद्दी पर हक जिताना चाहा परंतु भाई गुरदास जी तथा बाबा बुड्ढा जी ने संगत को इस गुमराहकुन प्रचार से सुचेत किया तथा गुरु-घर से जोड़े रखा।

श्री गुरु अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी तथा बाबा बुड्ढा जी से श्री अमृतसर सरोवर में श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण के बारे में विचार-चर्चा की तो गुरु जी के हुक्म अनुसार बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी, भाई साल्हो जी तथा अन्य मुखी सिक्खों की निगरानी तले श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण का कार्य आरंभ हुआ। बाबा बुड्ढा जी इस सेवा की निगरानी अमृत सरोवर की परिक्रमा में एक बेरी के नीचे बैठकर करते थे।

सन् १५९० ई में श्री गुरु अरजन देव जी धर्म प्रचार हेतु रवाना हुए तो बाबे दी बीड़ से उन्होंने बाबा बुड्ढा जी को साथ लेकर मौजूदा तरनतारन वाले स्थान पर पहुंचे। 'तवारीख गुरु

खालसा' के अनुसार गुरु जी ने इस स्थान पर एक नगर बसाने तथा बड़ा सरोवर बनाने की इच्छा जाहिर की। गुरु जी की इस इच्छा पर फूल चढ़ाने के लिए बाबा बुड्ढा जी ने नूरदीन, खारा तथा पलासौर के चौधरियों से बात की, क्योंकि यह ज़मीन इन तीनों गांवों की शामलाट जगह थी। गुरु जी ने यह १८०० बीघे ज़मीन खरीदकर सन् १५९० ई में तरनतारन की नींव रखी तथा एक बड़ा सरोवर बनवाया।

गुरु के महल माता गंगा जी गुरु-दरबार में आई हुई संगत की सेवा बड़ी श्रद्धा-भावना से करते थे। एक बार आप गुरु जी से आज्ञा लेकर बाबा बुड्ढा जी तथा संगत के लिए गुरु का लंगर (मिस्से प्रशादे, लस्सी (शाश), प्याज आदि) लेकर बाबे दी बीड़ (झबाल) पहुंचे। बाबा जी सादा भोजन छकते थे और सादा लिबास पहनते थे। बाबा जी ने बहुत ही प्यार से प्रशादा छका व माता गंगा जी को महांबली पुत्र होने की आशीष दी:

तुमरे ग्रहि प्रगटेगा जोधा ॥
जा के बल गुन किनहूं ना सोधा ॥

(गुरबिलास पा: छेवीं)

जब बाल श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब थोड़े बड़े हुए तो श्री गुरु अरजन देव जी ने अक्षर विद्या व शस्त्र विद्या के साथ घुड़सवारी की शिक्षा आदि की जिम्मेदारी बाबा बुड्ढा जी को सौंपी। श्री गुरु अरजन देव जी बाल श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को उंगली पकड़कर खुद बाबा जी के पास बीड़ साहिब ले गए। बाबा बुड्ढा जी ने पूरी लग्न एवं मेहनत से यह दायित्व निभाया :

शसत्र शासत्र की विद्या पाई।
हरि गोबिंद मन अति हरखाई।

जब श्री गुरु अरजन देव जी ने पावन स्वरूप 'आदि श्री (गुरु) ग्रंथ साहिब' की तैयारी की तो बाबा बुड्ढा जी ने पहले गुरु साहिबान की बाणी एकत्र करने के लिए श्री गुरु अरजन देव जी की मदद की :

एक दिवस प्रभ प्रातहकाल।
दइआ भरे प्रभ दीन दयाल।
यह मन उपजी, प्रगटिओ जग पंथ।
तिह कारन कीजै अब ग्रिंथ ॥२॥

जब गुरु साहिब आदि श्री (गुरु) ग्रंथ साहिब में बाणी दर्ज करने के लिए बाबा मोहन जी से पोथियां लेकर आदर सहित पालकी में रखकर श्री अमृतसर पहुंचे तो बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी तथा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी आगे से लेने के लिए गए। जब मानवता के आधार हेतु यह पवित्र ग्रंथ तैयार हो गया तो बाबा बुड्ढा जी को प्रथम ग्रंथी स्थापित किया गया। 'गुरबिलास पातशाही छेवीं' के अनुसार :

करत बिचार अैस ठहराई।
बुड्ढा जी सेवा निपुनाई।
गुर नानक इन दरबि कराए।
करि है इहु मनि अनंदु पाए ॥१५॥

बाबा जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को मंजी साहिब पर सुशोभित किया तो गुरु जी ने बाबा जी को संबोधन करते हुए कहा :

बुड्ढा साहिब खेलहु ग्रिंथ।
लेहु आवाज़ सुनहि सभि पंथ ॥३२॥
अदब संग तबि ग्रिंथ सुखोला ॥
ले आवाज़ बुड्ढा मुख बोला ॥३३॥

जब आदि श्री (गुरु) ग्रंथ साहिब का प्रकाश हुआ तो पहला हुक्मनामा भी बाबा बुड्ढा जी ने संगत को श्रवण करवाया :

सूही महला ५ ॥
संता के कारजि आपि खलोइआ हरि कंमु करावणि आइआ राम ॥
धरति सुहावी तालु सुहावा विचि अंम्रित जलु छाइआ राम ॥

अंम्रित जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ सगल मनोरथ पूरे ॥
जै जै कारु भइआ जग अंतरि लाथे सगल विसूरे ॥
पूरन पुरख अचुत अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ ॥
अपना बिरदु रखिआ परमेसरि नानक नामु धिआइआ ॥ *(पन्ना ७८३)*

जब श्री गुरु अरजन देव जी लाहौर रवाना होने लगे तो संगत में एलान कर गए कि उनके बाद गुरगद्दी का वारिस साहिबज़ादा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब होंगे। श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के बाद गुरु-हुक्म अनुसार बाबा बुड्ढा जी ने श्री हरिगोबिंद साहिब को गुरगद्दी पर विराजमान करने की रस्म अदा की। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने बाबा बुड्ढा जी को दो कृपाणें पेश करने के लिए कहा। गुरु जी ने बाबा जी के हाथों मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण की ताकि ज़ालिम हकूमत की ज्यादतियों का मुकाबला किया जा सके।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने शहीद पिता की इच्छाओं के अनुसार तैयारी शुरू कर दी। उन्होंने अकाल बुंगे (श्री अकाल तख़्त साहिब) का निर्माण बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी के सहयोग सहित खुद किया।
किसी राज नहि हाथ लगायो।
बुड्ढा औ गुरदास बनायो।(गुरबिलास पा. छेवीं)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने संगत को फरमान जारी किया कि गुरु-दरबार में अच्छे शस्त्र, बड़िया घोड़े व अपनी जवानियों की भेंटाएं लेकर हाज़िर हों। मुगल हकूमत को यह किस तरह बर्दाश्त हो सकता था कि कोई उनके बराबर सरकार बनाकर फरमान जारी करे? इसी कारण गुरु जी को ग्वालियर के किले में कैद कर दिया गया। बाबा बुड्ढा जी ने गुरु जी की याद को हर समय ताजा रखने के लिए चौंकी साहिब की रीति श्री हरिमंदर साहिब में चलाई जो आज भी जारी है। माता जी के हुक्मानुसार बाबा बुड्ढा जी ग्वालियर गए। जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के दर्शन करने की आज्ञा न मिली तो गुरु-यश करते हुए किले की परिक्रमा करने लग गए। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ५२ राजाओं समेत ग्वालियर के किले से रिहा होकर श्री अमृतसर आए तो बाबा बुड्ढा जी ने गुरु जी के आने की खुशी में श्री हरिमंदर साहिब में दीपमाला की।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी अपने सुपुत्र श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी को उस समय के अध्यापकों में से प्राबुद्ध बाबा बुड्ढा जी के पास ले गए तथा आप जी ने अपने मुखारबिंद से यह बचन किए, हे जागृत बुजुर्गवार! आप जी ने मुझे विद्या प्रदान करने की भरपूर कृपा की, अब आप जी मेरे सुपुत्र तेग बहादर को विद्या का दान बख़्शने का कृतार्थ कीजिए। श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी ने बाबा जी के आगे शीश झुकाया, जिन्होंने उन्हें आशीषें दी व शिक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी निभाई। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी से आज्ञा लेकर बाबा बुड्ढा जी रमदास आ गए। बाबा बुड्ढा जी अब बहुत वृद्ध हो चुके थे। उन्होंने अंतिम समय समीप जान गुरु-दर्शनों की इच्छा प्रकट की। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी बाबा बुड्ढा जी की विनती प्रवान कर रमदास पहुंचे। बाबा जी अंतिम समय की खुशी प्रतीत कर रहे थे। १४ मार्गशीर्ष, संवत् १६८८ को बाबा जी १२५ वर्ष की उम्र भोगकर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के पावन हाथों में अकाल चलाना कर गए। बाबा जी का अंतिम संस्कार गुरु साहिब ने अपने हाथों से किया :
चिखा उपर जब ही धरी, साहिब बुड्ढे देहि।

हरिगोबिंद के नैण ते, चलयो नीर सनेह।
(गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

फिर वो परिवार को भाणा (प्रभु-हुक्म) मानने व संगत को बाबा जी के जीवन से प्रेरणा लेने का उपदेश करके श्री अमृतसर आ गए।

बाबा बुड्ढा जी के बाद उनके सुपुत्र भाई भाना जी के अपने समकालीन श्री गुरु हरिराय साहिब जी की, भाई भाना जी के सुपुत्र भाई गुरदित्ता जी ने श्री गुरु तेग बहादर साहिब को तथा भाई गुरदित्ता जी के पुत्र भाई राम कुइर जी ने अपने समकालीन श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को गुरिआई का टीका लगाने की रस्म अदा की। इसके अलावा बाबा बुड्ढा जी के वंशज़ समय-समय पर गुरमति के प्रचार-प्रसार, प्रबंध, जंगी मुहिमों तथा अन्य कामों में भी बढ-चढ़कर गुरु-घर की सहायता करते रहे।

भाई भाना जी की मृत्यु के बाद उनके बड़े सुपुत्र भाई जलाल जी ने अपने पिता की जिम्मेदारी संभाली किंतु उम्र ने ज्यादा देर तक उनका साथ न दिया। लगभग छ: माह के बाद वे अकाल चलाना कर गए। भाई जलाल जी भी संत स्वभाव के व्यक्ति थे। भाई जलाल जी के बाद भाई सरवण जी, भाई झंडा जी तथा उनके बाद भाई गुरदित्ता जी तथा बाद में भाई राम कुइर जी भी अपनी-अपनी समझ व समर्था के अनुसार गुरु-घर की सेवा करते रहे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की खालसा सृजना से सिक्ख लहर में ऐसा मोड़ (क्रांति) आया कि बाबा बुड्ढा जी का खानदान इससे अनभिज्ञ न रहा, इनके खानदान में से भाई कुइर सिंघ जी ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के हाथों अमृत पान किया व सिंघ सजकर भाई गुरबख़्श सिंघ बन गए :

गोबिंद सिंघ इह बचन उचारा। गुरबखश सिंघ है नाम तुमारा।
हमरी तुम सिउ अधिक प्रीत। दरसन देवहु मुहि नित नीत ॥४८॥ *(कवि सौंधा सिंघ)*

भाई गुरबख़्श सिंघ के सुपुत्र भाई मुहर सिंघ तथा भाई अनूप सिंघ थे। भाई मुहर सिंघ नाम-सिमरन के साथ-साथ बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार घोड़े व शस्त्र भी रखने लगा :

मुहर सिंघ गुरिआई पाई। राज जोग की रीति कमाई।
एक ओर अस्व रंग राते। एक ओर झूले गज माते।५०। *(कवि सौंधा सिंघ)*

अगला उत्तराधिकारी भाई शाम सिंघ एक तरफ प्रभु का खौफ खाने वाला भजनीक (भजन बंदगी करने वाला) तथा दूसरी तरफ महादानी व परोपकारी व्यक्ति था :

परसुआरथ महि बिक्रम जान।
परकारज महि निस दिन धिआन।
वैदन ते औखध करवावै। रोगी जो ता के चल आवे ॥६२॥
दइआ करे ता के वहु देइ। चंगा करे परम जस लेइ।
जे को खुधिआ अरबी होइ। ता के भोजन देवे सोइ। *(कवि सौंधा सिंघ)*

इसके बाद भाई कान्ह सिंघ तथा भाई कान्ह सिंघ के बाद उनके सुपुत्र भाई सुजान सिंघ गद्दीनशीन हुए, यह कवि सौंधा सिंघ के समकालीन थे। ۞

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का चरण-स्पर्श प्राप्त
गुरुद्वारा कोठा साहिब, वल्ला

*-स. बिक्रमजीत सिंघ**

सिक्ख गुरु साहिबान ने अपने-अपने जीवन काल के दौरान जहां-जहां भी चरण डाले वह धरती सर्वदा के लिए सौभाग्यवान हो गई। जंगली एवं वीरान इलाके पावन धार्मिक स्थान बनने के साथ-साथ शहरों, कसबों आदि में तबदील हो गए। बंज़र ज़मीनें पुन: हरियाली से ओत-प्रोत होकर समूची मानवता के लिए वरदान बन गईं। गुरबाणी में फरमान है :

सा धरती भई हरीआवली जिथै मेरा सतिगुरु बैठा आइ ॥ *(पन्ना ३१०)*

वह धरती सदा के लिए पूजने योग्य हो गई, जहां किसी गुरु साहिब ने सिक्खी के प्रचार-भ्रमण के दौरान पड़ाव किया। सिक्खों ने उस स्थान पर यादगार के रूप में गुरुद्वारा साहिबान स्थापित कर दिए।

इसी संदर्भ में जब श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी को भाई मक्खण शाह ने 'बकाला' गांव की धरती पर 'गुरु लाधो रे' का नारा बुलंद कर संगत में 'नवम् गुरु' के रूप में प्रकट किया तो इसके उपरांत श्री गुरु तेग बहादर साहिब 'बकाला' गांव से भाई मक्खण शाह और अपने कुछ अन्य सिक्खों के साथ श्री अमृतसर में श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन-दीदार करने पधारे। उस समय श्री हरिमंदर साहिब पर 'मसंदों' का कब्ज़ा होने के कारण उन्होंने गुरु जी को दर्शन न करने दिये और श्री हरिमंदर साहिब के किवाड़ बंद कर लिए। वास्तव में मसंदों को यह डर था कि श्री गुरु तेग बहादर साहिब कहीं श्री हरिमंदर साहिब पर कब्ज़ा न कर लें।

मसंदों की इस करतूत की वजह से गुरु जी श्री अकाल तख़्त साहिब के निकट परिक्रमा में एक 'वृक्ष' के नीचे बने थड़े पर बैठ प्रभु-भक्ति में विलीन हो गए। वर्तमान में इस स्थान पर 'गुरुद्वारा थड़ा साहिब' सुशोभित है। तत्पश्चात गुरु जी इस स्थान से चलकर श्री अमृतसर शहर से बाहर की तरफ रवाना हो गए। श्री हरिमंदर साहिब से लगभग ३ कि. मी. की दूरी पर पहुंचने के बाद आप ने एक वृक्ष के नीचे विश्राम किया जहां आजकल 'गुरुद्वारा दमदमा साहिब' सुशोभित है। वर्तमान में यह गुरुद्वारा श्री अमृतसर-वल्ला रोड पर स्थित है। गुरु जी कुछ समय इस स्थान पर आराम करने के बाद थोड़ा-सा और आगे आ गए। यह जगह श्री अमृतसर से लगभग ६ कि. मी. की दूरी पर स्थित गांव 'वल्ला' थी, जहां आप जी एक वृक्ष के नीचे विराजमान हो गए। इसी गांव की एक श्रद्धालु स्त्री बीबी हरीआं ने बहुत ही प्रेम और श्रद्धा से गुरु जी को अपने घर में ले जाकर अपने कोठे (मकान) में विश्राम करवाकर भोजन इत्यादि छकाया।

दूसरी तरफ जब श्री अमृतसर की संगत को गुरु जी के श्री अमृतसर आगमन और मसंदों की करतूत की ख़बर मिली तो वह बहुत उदास हुई। समूची संगत गुरु साहिब को ढूंढती हुई

(शेष पृष्ठ ४३ पर)

***S/o S. Ranjeet Singh, 2946/7, Bazar Loharan, Chowk Lashmansar, Sri Amritsar, M : 8727800372**

परोपकारी सिक्ख विरसे की लासानी दास्तां : बड़ा घल्लूघारा

*-प्रो सुरिंदर कौर**

सिक्ख इतिहास का सबसे घातक व प्रचंड युद्ध, जो 'बड़ा घल्लूघारा' के नाम से विख्यात है। युद्ध लड़ना हारने या जीतने का ही परिणाम होते हैं परंतु इतिहास में कुछ युद्ध हार-जीत से परे अस्तित्व के लिए भी लड़े जाते रहे हैं। कुछ युद्ध परमार्थ के लिए लड़े गए हैं और कभी-कभी युद्ध थोपे भी गए हैं। ऐसे थोपे हुए युद्ध हमेशा ही किसी न किसी अहंकारी व्यक्ति की अंधी नीतियों और दिशाहीन महत्वाकांक्षा का परिणाम होते हैं। संसार के इतिहास में ऐसे अहंकारियों की कमी नहीं है। जहां इतिहास इनकी 'हउमै' द्वारा उपजी क्रूरता, वहशीपन और अत्याचार का साक्षी है वहीं निष्पक्ष होकर भविष्य को उनके सर्वनाश का वृत्तांत भी सुना रहा है। भाई साहिब भाई गुरदास जी सिक्ख साहित्य के मूर्धन्य विद्वान और श्रेष्ठ इतिहासकारों में से एक हैं। उन्होंने बड़ी ही सरल शैली में संसार के इन अहंकारियों के सैकड़ों वर्षों के इतिहास को कुछ शब्दों में समेटकर इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

लख दुरयोधन कंस लख लख दैत लड़ंदे।
लख रावण कुंभकरण लख लख राकस मंदे।
परसराम लख सहंसबाहु करि खुदी खहंदे।
हरनाकस बहु हरणाकसा नरसिंघ बुकंदे।
लख करोध विरोध लख लख वैरु करंदे।
गुरु सिख पोहि न सकई साधसंगि मिलंदे ॥
(वार ३८:३)

जहां भाई साहिब इन अहंकारी योद्धाओं का वर्णन करते हैं वहीं वे यह भी बता रहे हैं कि सच्चा गुरसिक्ख सदा सतिसंग के सानिध्य में रहता है इसलिए उसे अहंकार छू भी नहीं सकता। वह व्यर्थ में युद्ध नहीं करता परंतु एक सच्चा गुरसिक्ख कायर भी नहीं है। वह अहंकारवश होकर किसी पर आक्रमण नहीं करता किंतु किसी अहंकारी के आक्रमण पर चुप भी नहीं बैठता, मुंह तोड़ जवाब देता है। अन्याय का विरोध करने की सामर्थ्य सिक्खों को जन्म-घुट्‌टी में मिलती है। वे स्वयं चाहे कितने भी कठोर हालातों में रहें पर वक्त पड़ने पर बड़े से बड़े ज़ालिम से टकराने से भी नहीं डरते, कभी युद्ध-भूमि में जाकर पीठ नहीं दिखाते। सिक्खों का जीवन फलसफा ही यह है :

लूणु साहिब दा खाइ कै रण अंदरि लड़ि मरै सु जापै।
सिर वढै हथीआरु करि वरीआमा वरिआमु सिञापै। (वार ३०:१४)

सिक्ख देश-धर्म पर अपना सब कुछ कुर्बान कर देते हैं। यह तो सिक्खों के लिए कहावत ही बन गई है कि "वे तेगों की छांव तले पलते हैं।" पंजाब की धरती हर पचास-सौ साल में युद्ध के मैदान में बदलती रही है। देश की सरहद होने के कारण पंजाब और पंजाब के सिक्ख हर विदेशी हमलावर के सामने सीना तानकर उसे रोकने के लिए तत्पर रहे हैं। पूरे देश को सुरक्षित रखने के लिए हर बार पंजाब की धरती लहू से सराबोर हुई है। इसी परोपकारी भावना का निर्वाह करते हुए सिक्खों

***R.No. 2, Banta Singh Chawl, Opp. Manish Park, Jija Mata Marg, Pump House, Andheri (E), Mumbai-400093**

ने अपने इतिहास के सबसे घातक युद्ध 'बड़े घल्लूघारे' का सामना किया, जो एक अहंकारी, लुटेरे, हमलावर अहमद शाह अब्दाली के कारण सिक्खों पर थोपा गया था।

जहां यह युद्ध सिक्ख इतिहास का बड़ा खूनी साका है वहीं यह युद्ध सिक्खों के अटूट और बेखौफ हौसलों का साक्षी बनकर देश को स्वाभिमान का नया पाठ भी पढ़ा रहा है। यह साका दुनिया के इतिहास को और विशेषत: भारत के इतिहास को यह बता रहा है कि किस तरह इस देश की इज्जत-आबरू की रक्षा का मूल्य सिक्ख कौम ने अपने लहू का सागर बहा कर चुकाया था। यह वो दिन था जिस दिन, एक ही दिन में लगभग ३०-३५ हज़ार सिक्खों (उस समय की मौजूदा आधी सिक्ख कौम) को अब्दाली ने एक ही दिन में शहीद कर दिया था। इनका कसूर क्या था, भारत की असहाय अबलाओं की आबरू की रक्षा करना? सिक्ख कौम अपने इस दायित्व को कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी निभाती रही है। ऐसे महान गुरसिक्खों, जिन्होंने सतिगुरु के प्रेम में अपने जीवन तक को न्यौछावर कर दिया, उनके लिए श्री गुरु अरजन देव जी कहते हैं :

आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥
नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥

(पन्ना २९५)

ऐसे महान गुरसिक्खों के अथक परिश्रम को कौम में सदा जीवित रखने के लिए, आने वाली पीढ़ियों के लिए एक पथ-प्रदर्शक, प्रकाश-स्तंभ बनाने के लिए पंथ ने रोज़ाना की अरदास में इन शहादतों को विशेष स्थान दिया है। गुरु साहिबान, पांच प्यारों, चार साहिबजादों को याद करने के बाद हम जितनी भी शहादतों का स्मरण करते हैं वे सभी शहादतें उन ८०-८५ वर्षों में हुई हैं जिस समय कलगीधर पिता पंथ को सदा के लिए दैहिक रूप से छोड़ चले गए थे और इस समय से लेकर तब तक जब तक महाराजा रणजीत सिंघ ने राज्य स्थापित नहीं किया था। उस काल में पंथ ने जितना आक्रमणकारियों का सामना किया, जितने उतार-चढ़ाव देखे और जितना लहू बहाया उसका सिक्ख इतिहास में अन्य उदाहरण मिल पाना कठिन है। इतिहास इस बात का भी साक्षी है कि गुरु साहिबान के बाद से लेकर आज तक के समय में सब्र और धैर्य के साथ जिन शिखरों को इन महान गुरसिक्खों ने छुआ, जिन कठिन परिस्थितियों में ये मरजीवड़े अडोल रहे, उसकी दूसरी मिसाल मिल पाना असंभव है। इस दौर में कई-कई बार सिक्ख धर्म को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया, कई बार सिक्खों का सामूहिक नरसंहार हुआ, यहां तक कि सिक्खों के सिरों के दाम तक लगा दिए गए। देश के हर गली-कूचे पर गश्ती फौजें सरेआम सिक्खों का शिकार करती फिरतीं। बड़ा घल्लूघारा ऐसे ही विकट काल की सबसे दुखदायी घटना है। इस घटना को समझने के लिए हमें समसामयिक हालातों को समझना होगा।

उस समय देश के केंद्र दिल्ली में मुगलों का राज्य था, पर औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल राज्य अपनी साख गंवा बैठा और नाम-मात्र का ही केंद्रीय राज्य रह गया था। वास्तव में भारत के मध्यकालीन समय में एक बड़े साम्राज्य के स्थान पर छोटे-छोटे राज्यों का ही बोलबाला रहा है और इनमें से अनेक तो अपनी सारी शक्ति आपस में लड़ने-भिड़ने में ही नष्ट कर देते थे। स्वार्थ, ईर्ष्या और अहंकार से भरे ये राजा, महाराजा व रियासतदानों में अपने घमंड के प्रकटन को लेकर अक्सर खींचतान चलती रहती और वे नित्य ही अपने तथाकथित राज्यों की सीमाओं को बढ़ाने के लिए युद्ध में

उलझे रहते। कुछ बेचारे तो अपने राज्यों के अस्तित्व को बचाने के लिए विवशता के कारण ही इसमें फंस गए थे; कइयों ने अपनी राज्य-सत्ता की भूख पर धर्म का आवरण भी चढ़ा लिया था। कुल मिलाकर हम इतना कह सकते हैं कि सारे देश में अराजकता थी, अस्थिरता का वातावरण बना हुआ था, साथ ही उत्तर-पश्चिम की ओर से होने वाले आक्रमणों ने भी बहुत हद तक किसी भी राज्य को स्थिर नहीं रहने दिया था। इन सभी कारणों की चहुंतरफी मार सिक्खों पर पड़ी। वैसे अभी गुरु साहिबान के समय तक किसी ने भी अपना राज्य स्थापित नहीं किया था, परंतु सिक्खों की धन-संपत्ति व रूप-यौवन ने कइयों का ध्यान अपनी ओर खींचा। खालसा के सृजन के बाद श्री अनंदपुर साहिब को केंद्र बनाकर की गई सिक्खों की सैनिक कार्रवाइयां पहले ही पहाड़ी राजाओं से लेकर मुगल दरबार तक की नींद हराम कर चुकी थीं।

गुरु साहिबान के बाद बाबा बंदा सिंघ बहादुर ने पहली बार सिक्ख राज्य स्थापित किया, परंतु उनकी अनुपम शहादत के बाद पंजाब में जुल्मों की फिर से ऐसी आंधी आई जिसका सामना यहूदियों के बाद दुनिया के इतिहास में केवल सिक्खों ने ही किया है। इस दौरान कई-कई बार सिक्ख धर्म को गैरकानूनी करार दे दिया गया। सरकारी अदेश जारी हो गए कि जहां-जहां कोई केशाधारी नज़र आता है बंदी बना लिया जाए; सिक्खों के घर-बार, खेत व अन्य संपत्ति जब्त कर ली जाए। यह बड़ी मुश्किल का दौर था। अठारहवीं सदी के आरंभिक ४०-५० साल इसी हालात में गुज़रे थे। सिक्खों ने अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए घर-बार छोड़ दिए, जंगलों, पर्वतों व मरुस्थलों में शरण ली। एक ओर सिक्ख जंगलों में किसी तरह दिन गुज़ार रहे थे तो दूसरी ओर सिक्खों के सिरों के दाम लगने लगे। ज़मीन-जायदाद जब्त होने के कारण मज़बूरन सिक्खों को अपने परिवारों को भी अपने साथ ही रखना पड़ा।

जरा सोचने की कोशिश करें कि किस तरह उन सिंघों, सिंघणियों, बच्चों, बुजुर्गों ने खुले आसमान तले पल-पल पीछा करती मौत का सामना करते हुए दिन काटे होंगे! मेहनतकश, गरीब व कठोर रोज़गार वाले सिंघों-सिंघणियों ने तो जैसे-तैसे अपने आप को हालात के अनुसार ढाल लिया। जिनके अपने कारोबार थे, दुकानें थीं, नौकर-चाकर थे, जिन सिंघणियों ने अपनी कोठियों के बाहर की गलियां भी कभी अकेले पार नहीं की थीं, आज वे सब अपने धर्म की रक्षा के लिए इन बीआबान कंटीले जंगलों में रहने के लिए विवश थे। सिर पर छत के स्थान पर आग-पाला बरसाता खुला आकाश था; न जमीन, न कोई बिछौना, न ठंडी ठिठुरती हवाओं को रोकने के लिए कोई दीवार या कनात थी; न कोई रोज़ी-रोटी का साधन, न अपने भाई-बंधुओं के कुशल-क्षेम का कोई समाचार, न दो वक्त की रोटी, न तन पर कोई ढंग का कपड़ा और इस पर यदि कोई घायल या बीमार हो जाए तो कोई उपचार नहीं। यह अति कठिन समय था। दूसरी ओर गश्ती फौजें चप्पे-चप्पे पर खालसे का सुराग ढूंढती फिरतीं। पत्ता-पत्ता सिक्खों का वैरी हो गया था। सिक्खों ने भी अपने आप को छोटे-छोटे दलों में बांट लिया और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में फैल गए। कइयों ने बीकानेर के मरुस्थलों का रुख किया, कई शिवालिक के पर्वतीय क्षेत्रों की ओर निकल गए, फिर भी सिक्खों की मुख्य तादाद श्री अमृतसर व लाहौर के मध्य भाग में, काहनूवान (ज़िला गुरदासपुर) के जंगलों में छिप

गई। यह उस समय बड़ा घना कंटीला इलाका था, जिसमें एक आम व्यक्ति दिन के उजाले में भी पैर रखना उचित नहीं समझता था। जहां अच्छे से अच्छा कद्दावर सैनिक भी अंदर जाने से कतराता था, वही काहनूवान के जंगल वर्षों तक सिक्खों की शरणस्थली बने रहे।

सिक्ख सब कुछ अकाल पुरख वाहिगुरु की आज्ञा के समक्ष नत्मस्तक होकर सहते रहे परंतु इतने विकट हालातों में भी उन्होंने अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना नहीं की। स्वयं अत्याचार का शिकार होने के बावजूद अन्य शोषितों की सहायता 'दल खालसा' सदा करता रहा था। इसी तरह नादिर शाह के आक्रमण के समय सिक्खों ने अपने प्राणों की बाज़ी लगाकर सैकड़ों अबलाओं को छुड़ाकर देश की लाज बचायी थी।

नादिर शाह के बाद अहमद शाह अब्दाली अफगानिस्तान का शासक बना। भारत की धन-संपत्ति व रूप सदा उसे अपनी ओर आकर्षिक करते रहते, जिसे प्राप्त करने के लिए अब्दाली ने सन् १७४८ से लेकर १७६१ ई तक पांच बार इस देश पर आक्रमण किया। पंजाब चूंकि बिलकुल सीमावर्ती राज्य है और दूसरी ओर धन एवं सौंदर्य से मालामाल भी, इसलिए पंजाब को उसने अपना खास निशाना बनाया।

सन् १७६० तक मराठे लगभग सारे देश पर हावी हो चुके थे, यहां तक कि दिल्ली में मुगल शाह आलम को भी उन्होंने ही तख्त़ पर बिठाया था। अटक दरिया के उत्तरी छोर तक वे कर वसूला करते थे। बहुत हद तक उन्होंने सीमाओं को सुरक्षित भी करने का प्रयास किया था। सन् १७५० से लेकर १७६० ई तक के दस साल सिक्खों के लिए भी कुछ ठीक-ठाक ही रहे थे। मुगलों की ताकत घटने के साथ ही सिक्खों ने फिर ज़ोर पकड़ना शुरू कर दिया और धीरे-धीरे नगरों में बसना भी आरंभ कर दिया।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि देश में आपसी फूट सिर चढ़कर बोल रही थी। भरतपुर के राजपूत राजा सूरजमल के लिए मराठों को कर देने वाली बात असहनीय हो रही थी। सबसे अधिक विरोध किया रोहिलखंड के शासक नजीब ख़ान ने। यदि मराठे कर वसूल रहे थे तो वे जनता की सुरक्षा का उत्तरदायित्व भी निभा रहे थे, परंतु इस देश में जयचंद जैसे गद्दारों की कमी नहीं है। नजीब ख़ान भी ऐसे ही गद्दारों में से एक था। उसने मराठों के विरुद्ध चढ़ाई करने के लिए अब्दाली को निमंत्रण भेज दिया। सन् १७६१ में पानीपत के मैदान में अब्दाली व मराठों में घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में मराठों को भीषण पराजय का सामना करना पड़ा और उनका सेनापति सदाशिव राव भाउ मारा गया। यह अब्दाली का पांचवा हमला था जो केवल मराठों के विरुद्ध था। सिक्खों का इस युद्ध से कोई सीधा संबंध नहीं था। मराठों की हार के बाद तीन चार महीने यहीं रहकर अब्दाली ने लूटमार की और आगे उत्तर प्रदेश तक के क्षेत्रों को भी लूटा व आतंकित किया। २० मार्च, १७६१ ई को अब्दाली ने दिल्ली में पड़ाव डाला। इस बार अब्दाली के खेमे में हज़ारों बंदी थे, जिनमें २२०० सुंदर अविवाहित व नवविवाहित स्त्रियां भी थीं। इतिहास साक्षी है कि इन अबलाओं की करुण पुकार किसी तथाकथित सूरमे ने नहीं सुनी। उस समय बेशक मराठों को पराजय का सामना करना पड़ा, मगर उन्होंने सिर झुकाने के स्थान पर सिर ऊंचा करके मुकाबला करने का साहस तो किया। आश्चर्य की बात है कि बाकी सारा देश क्या कर रहा था? उस समय क्यों किसी और ने इन मासूमों की इस करुण पुकार को नहीं सुना? सभी अपने आप को बचाने और अब्दाली को

खुश करने में लगे थे।

जब किसी ओर से कोई सहायता नहीं मिली तो १० अप्रैल, १७६१ ई को वैसाखी के अवसर पर हिंदुओं के धार्मिक व सामाजिक नेताओं ने श्री अमृतसर पहुंचकर खालसे की शरण में विनती की। सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया उस समय दल खालसा के सरदार थे। उन्होंने इस विपत्ति को पूर्णत: समझते हुए सहायता करने का निर्णय लिया। अब्दाली की सेना के साथ सीधे टकराव का तो प्रश्न ही नहीं उठता था, इसलिए कुछ चुनिंदा सिंघ सरदारों को साथ लेकर स. जस्सा सिंघ श्री गोइंदवाल साहिब के निकट ब्यास नदी के तट पर पहुंच गए। जिस समय अब्दाली की सेना ब्यास पार कर रही थी सिक्खों ने अचानक ही उस पर हल्ला बोल दिया और युवतियों को छुड़ा लिया। जत्थेदार साहिब ने इन सभी लड़कियों को सम्मान सहित उनके घरों तक पहुंचाने का विशेष उपक्रम किया। जिन लड़कियों को उनके परिवारों ने स्वीकार नहीं किया उन्होंने सिक्ख दलों में रहकर अपने दिलेर सिक्ख भाइयों की सेवा करने का निर्णय लिया और अमृत-पान कर सिक्ख धर्म को सहर्ष स्वीकार कर लिया।

बेशक अब्दाली को कोई विशेष आर्थिक हानि नहीं हुई थी फिर भी युवतियों व गुलामों को छुड़ाया जाना एक तीखा प्रहार था, जिससे उसका मन क्रोधित हो गया। काबुल लौटता हुआ वह अपने गुप्तचर पंजाब में छोड़ गया। उसने मन ही मन यह निर्णय कर लिया कि अचानक हमला क्या होता है यह मैं सिक्खों को जरूर दिखाऊंगा। इस प्रकार हिंदुओं की बहू-बेटियों की आबरू बचाने का बदला उसने तीस हज़ार सिक्खों को शहीद करके लिया।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि अपनों के साथ गद्दारी करना भी इस देश के कई आदमियों के खून में फैल चुका था। जंडिआला (ज़िला श्री अमृतसर) का महंत आकुल दास अपनी ही कौम की बहू-बेटियों की रक्षा करने वाले सिक्खों के खिलाफ अब्दाली के लिए गुप्तचरी करता रहा। उसी साल २७ अक्तूबर, १७६१ ई के बंदी छोड़ दिवस (दीवाली) पर खालसे ने अपने विरोधियों के बारे में ठोस रणनीति बनाई; साथ ही महंत आकुल दास को भी दरबार खालसा में उपस्थित होने का आदेश दिया, परंतु उसने पेश होने के स्थान पर अब्दाली को सिक्खों पर आक्रमण करने का न्यौता भेज दिया जो स्वयं ऐसे ही अवसर की खोज में था। उसने बुलावे पर अमल किया और हिंदोस्तान पर अपना छठा आक्रमण कर दिया जो केवल सिक्खों के विरुद्ध था।

सिक्खों को भी इसकी भनक लग चुकी थी, इसलिए सिक्खों ने पहले अपने परिवारों को सतलुज के पार ले जाकर सुरक्षित करने का निर्णय लिया, क्योंकि दल में बड़ी भारी तादात में सिंघणियां, बच्चे व बुजुर्ग मौजूद थे। ३ फरवरी, १७६२ ई को अब्दाली की सेना लाहौर पहुंच गई। सिक्खों ने हालात के अनुसार यह अनुमान लगाया कि वह अगले पांच-सात दिनों तक ही यहां पहुंच सकेगा। यही अनुमान उनके लिए सबसे घातक सिद्ध हुआ। यह बात वाकई हैरान कर देने वाली है कि केवल दो दिनों में अब्दाली और उसकी सेना ने लाहौर से मलेरकोटला तक का सफर बड़ी फुर्ती से तय किया और वे ५ फरवरी, १७६२ ई के दिन सतलुज के तट पर स्थित कुप्प रुहीड़ा नामक स्थान पर सिक्खों पर टूट पड़े। अब सिक्खों की भी समझ में आ गया कि शत्रु ने आक्रमण कर दिया है। सभी युद्ध के लिए डटकर खड़े हो गए। यह हमला मुंह-अंधेरे सुबह ४.३०-५.०० बजे के आस-पास अचानक हुआ था, इसलिए

सिक्खों को कोई योजना बनाने का समय ही नहीं मिला। किसी का अभी स्नान बाकी था, कोई पाठ कर रहा था, कोई घोड़ों को चारा-पानी डाल रहा था। सारे काम बीच में ही छोड़ दिए गए। बेशक हमला अचानक ही हुआ था फिर भी सिक्खों ने मैदान छोड़ने के स्थान पर डटकर मुकाबला करने की ठानी। परिवार भी साथ होने के कारण पहले ही हमले में सैकड़ों सिक्ख शहीद हो गए। किसी तरह मुखी सिंघों ने सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया के साथ मिलकर एक अस्थायी योजना बनाई और दल के आस-पास फौजी सिक्खों की दीवार-सी बना ली। बीच में स्त्रियों, बच्चों व बुजुर्गों को रखकर बचाने का यत्न किया गया; साथ ही अगली पंक्तियों में लड़ते हुए बरनाला नगर की ओर बढ़ना आरंभ किया।

आगे-आगे सरदार शाम सिंघ थे और अहमदगढ़ वाली दिशा में सरदार जस्सा सिंघ स्वयं थे। मलेरकोटला की तरफ के सिक्ख सरदार चढ़त सिंघ की कमान में लड़ रहे थे। अब सिंघों ने भी बड़ी वीरता के जौहर दिखाने शुरू कर दिए जिससे यह घमसान दोतरफा हो गया। हर ओर एक भगदड़-सी मच गई। अब्दाली के सेनापति हर ओर से प्रयास कर रहे थे कि वे खालसे की पहली कतार को तोड़कर बीच में जाकर न लड़ने वाले सिक्खों को मार सकें, जिनमें जैन ख़ान सबसे आगे था। सिक्ख जान की बाज़ी लगाकर लड़ रहे थे, परंतु फिर भी पीछे हटते हुए उनका बहुत अधिक जानी नुकसान हो रहा था। सिक्खों ने अपने गुरु साहिबान को याद किया। गुरबाणी की पंक्तियों को अपनी रसना से उच्चारण करते हुए वे 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जैकारे बुलंद करते रहे। उस समय केवल एक चढ़दी कला की भावना ही काम कर रही थी। सिंघ सरदार बार-बार कलगीधर पिता के यह शब्द अपनी हिम्मत बनाए रखने के लिए गा रहे थे:

न डरों अरि सो जब जाइ लरों निसचै करि अपनी जीत करों ॥

दो मील तक सिक्ख बहुत जोश से लड़ते हुए शत्रुओं के टुकड़े-टुकड़े करते हुए राह बनाते रहे। थोड़े समय में हर ओर लहू ही लहू दिखाई दे रहा था। अब्दाली की सेना का भी बहुत जानी नुकसान हुआ और सिक्खों का भी। सिक्ख योद्धाओं की गिनती से शत्रु योद्धाओं की तादात बहुत ज्यादा थी। लड़ने के अलावा और कोई रास्ता अब्दाली ने सिक्खों के लिए बाकी नहीं छोड़ा था। सिंघों ने भी घिरकर कत्ल हो जाने से जूझ कर शहीद होना बेहतर समझा। लड़ने वालों में अब १३-१४ साल के बच्चे भी सम्मिलित होने लगे। कई सिंघणियों ने भी आगे बढ़कर वीरता के जौहर दिखाए तथा कई शत्रुओं को मौत के घाट उतार दिया। कुछ सिक्खों ने पानी पिलाने, घायलों को संभालने व भारी सामान उठाकर साथ चलने की सेवा संभाली। घायलों की मरहम-पट्टी की मुख्य जिम्मेदारी सिंघणियों ने संभाली जिससे अधिक से अधिक सिक्ख युद्ध के लिए तत्पर हो सकें। कुछ सिक्खों ने एक खास सेवा संभाली जो थी मारे गए अफगानियों के शस्त्र जमा करके खालसाई फौज को देना, जिससे युद्ध जारी रह सके, क्योंकि सिक्खों के पास शस्त्र और गोला-बारूद लगभग समाप्त हो चुके थे।

सिक्खों के जोश और युद्ध के पैंतरे देख कर अब्दाली हक्का-बक्का रहा गया। अपने गुप्तचरों से उसने सिक्खों के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था, पर यह पहला अवसर था जब वह सिक्खों से आमने-सामने लड़ रहा था। अब अपने अहिलकारों से सिक्खों की प्रशंसा सुनते ही वह जलकर कोयला हो गया और उसने अंतर्मन

यह निर्णय कर लिया कि वह सिक्खों का समूल नाश करके ही दम लेगा। उसने अपने सिपहसालार वली ख़ान, भीखन ख़ान व जैन ख़ान को और अधिक शक्ति (सेना) लेकर लड़ने का आदेश दिया। उन्होंने तीनों ओर से बड़े भारी दसते को लेकर एक साथ हमला बोल दिया। सिक्खों की तादाद कम होने के कारण वे इस हमले को सहार न सके और हज़ारों की गिनती में शहीद हो गए। इस प्रकार से सिक्ख योद्धाओं द्वारा बनाई गई रक्षा-पंक्ति भी टूट गई और अंदरूनी दल को बहुत अधिक जानी नुकसान पहुंचा। अब्दाली ने मन बना लिया था कि दल के ऐन बीच पहुंच कर ऐसा करारा प्रहार किया जाए जिससे सिक्ख दोबारा उठ न सकें।

सिंघ सरदारों ने अब होशियारी और हिम्मत से काम लेते हुए अपने आप को संभाला। वे अब्दाली के नापाक इरादों को रोकने के लिए डट गए। फिर एक बार दोनों ओर से तेज घमसान मच गई। सारी धरती लहू से भीग गई थी। युद्ध का मैदान हर पल एक नया ही रूप धारण करता जा रहा था। इस प्रकार से लड़ते हुए रात होने तक सिक्ख लगभग बीस मील का सफर तय कर चुके थे। दूसरी तरफ अब्दाली के सिपाही, जिन्होंने पहले लगातार १५० मील की यात्रा की थी और अब पिछले दस घंटों से लड़ रहे थे, थक कर चूर हो चुके थे। अंत में सूरज ढलते ही दोनों पक्षों की ओर से युद्ध बंद हो गया और दोनों ही सतलुज के जल से अपनी प्यास बुझाने लगे।

इतिहास के अनुसार इस युद्ध में लगभग तीस हज़ार सिंघ, सिंघणियां व बच्चे शहीद हो गए, उस समय की लगभग आधी कौम। एक दिन में खालसे का इससे अधिक जानी नुकसान पहले कभी नहीं हुआ था। एक तरफ अब्दाली सिक्खों का नामोनिशान न मिटा सकने के कारण बौखलाया हुआ था, क्योंकि सिक्ख अभी जीवित थे, जिन्हें वह अपनी आंखों से देख चुका था। इस चिढ़ को उतारने के लिए लौटता हुआ वह श्री हरिमंदर साहिब को पूरी तरह ध्वस्त कर गया और शहीद सिक्खों के सिरों को गाड़ियों में भरकर लाहौर ले गया तथा उनको मुख्य दरवाजों में चिनवा दिया, जिससे आम लोगों के समक्ष वो अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर सके। दूसरी ओर इतने भारी नुकसान के बाद भी खालसे का यह हाल था :

झखड़ि वाउ न डोलई परबतु मेराणु ॥

(पन्ना ९६८)

सिक्ख पिछले ५०-६० वर्षों से ऐसे हालातों का सामना कर रहे थे, इसलिए वे अडिग रहे, टूटे नहीं। वे इसे खालसे के लिए अकाल पुरख वाहिगुरु का एक और खेल, एक और परीक्षा समझकर सह गए। प्रसन्नचित्त होकर ईश्वर की आज्ञा का पालन सिक्खी जज़्बे का एक अभिन्न अंग है। हर खुशी, हर दुख में सिक्ख अरदास करके परमात्मा का धन्यवाद ही करता है। उसका जीवन-दर्शन ही यह है:

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे एकै एकी नेतै ॥
बुरा नही सभु भला ही है रे हार नही सभ जेतै ॥
सोगु नाही सदा हरखी है रे छोडि नाही किछु लेतै ॥
कहु नानक जनु हरि हरि हरि है कत आवै कत रमतै ॥ *(पन्ना १३०२)*

इस जज़्बे का सबूत इस बात से मिल जाता है कि सिक्ख बहुत जल्दी उठ खड़े हुए। प्राचीन पंथ प्रकाश के अनुसार तीन महीने बाद खालसे ने फिर जैन ख़ान पर हमला किया। अब्दाली की अनुपस्थिति में वो इसे संभाल न सका और अमन-चैन बनाए रखने के लिए उसने मुआवजे के रूप में ५०,००० रुपए सिक्खों को दे दिए, यह बात और है कि बाहरी शह

मिलने से वह फिर अपने पुराने रवैये पर आ गया। इस घल्लूघारे के नौ महीने बाद ही सिक्ख फिर अपने ठिकानों पर आ गए। उसी साल बंदी छोड़ दिवस (दीवाली) पर श्री हरिमंदर साहिब में बड़ा भारी समागम हुआ। जो सिक्ख घल्लूघारे से बच गए थे वे दोबारा प्रचार-कार्य में सरगरम होने लगे। कई गृहस्थी सिक्खों ने भी अब जंगजू सिक्खों के साथ रहना शुरू कर दिया जिससे खालसे की शक्ति और बढ़ सके। पूरे देश से सैकड़ों नौजवान बच्चों ने श्री अमृतसर आकर अमृत-पान किया और पंथ की मुख्य धारा से जुड़ गए। सिक्खों ने अमृत सरोवर की खुदाई करवाई और श्री हरिमंदर साहिब का पुनर्निर्माण करवाया। सिक्खों में अब्दाली के विरुद्ध गुस्सा बरकरार रहा जिसे दल खालसा ने सन् १७६४ में बाबा दीप सिंघ जी के नेतृत्व में लड़े गए युद्ध में जहान ख़ान को मारकर उतारा। इस युद्ध में बाबा दीप सिंघ जी स्वयं भी शहीद हो गए। यह शत्रुओं के लिए स्पष्ट चुनौती थी कि "तुम मारकर भी असफल हो और हम मरकर भी सफल हैं।" इस देश में ऐसे प्रसंग बार-बार सिक्खों के साथ होते रहे हैं। सन् १९८४ को कोई भुला नहीं सकता। गुरदेव पिता की कृपा द्वारा हर बार सिक्खों ने अडोल रहकर वही जवाब दिया जो सन् १७६२ में अब्दाली को दिया था:

सिंघां कदे झुकणा नहीं।
सिंघां कदे मुकणा नहीं।
सिंघां नू झुकाउण वाला,
सिंघां नू मुकाउण वाला,
खिआल इक जुनून है।
कोई जुलम, कोई सितम,
सानूं झुका सकदा नहीं,
सानूं मिटा सकदा नहीं,
किओंकि साडीआं रगां विच,
कलगीधर दा खून है।

जहां इस घल्लूघारे ने अत्याचार व अत्याचारी की अति की नई ऊंचाइयों को प्रकट किया वहीं इसने सिक्खों की सहन-शक्ति और गुरु-चरणों पर सब कुछ समर्पित कर देने वाली भावना के लिए एक भयानक कसौटी प्रस्तुत की, जिसमें तप कर सिक्ख कंचन की भांति शुद्ध, निरोल और चमकते हुए बाहर आए, पंथ की छवि और निखर गई। जहां इस घल्लूघारे ने अब्दाली जैसे अहंकारी को सिक्खी सिदक की चट्टान से टकराने का मज़ा चखाया वहीं यह आने वाले समय के लिए भी एक चेतावनी थी। एक बात अवश्य है कि इस घल्लूघारे ने सिक्खों को ऐसे विकट व कठोर समय में एकजुट होने का अवसर दे दिया जिसने ऐसा कमाल का इतिहास बनाया। यह युद्ध सिक्ख कौम के लिए भी एक प्रकाश-स्तंभ है जो हमें न केवल भविष्य में भी एकजुट होकर जूझना सिखा रहा है वरन् सुचेत रहने का भी संदेश दे रहा है। महान हैं वे गुरसिक्ख जिन्होंने गुरु के भरोसे न केवल अत्याचारियों के दांत खट्टे किए वरन् अपने बहुमूल्य प्राणों की आहुति देकर सच्चे प्रेम का प्रमाण भी दिया; साथ ही अपनी सूझबूझ से कौम को समूल नाश से भी बचा लिया। धन्य है गुरु की बाणी जिसने सिक्खों के तन, मन और आत्मा को फौलाद बना दिया। जहां इस घल्लूघारे में अब्दाली ने कौम को समाप्त कर देने की योजना बनाई थी वहीं गुरु के मरजीवड़े (मरकर भी ज़िंदा रहने वाले) लालों को सिक्खी के अमिट होने का प्रतीक बना दिया। ❁

सिक्ख इतिहास का दर्दनाक पन्ना : बड़ा घल्लूघारा

*-डॉ. भगवंत सिंघ**

गुरु शब्द रत्नाकर महान कोश में भाई कान्ह सिंघ नाभा ने घल्लूघारा के शाब्दिक अर्थ तबाही, गर्क, सर्वनाश दिए हैं। उन्होंने बड़े घल्लूघारे के बारे में लिखा है, "२ ज्येष्ठ संवत् १८०३ में दीवान लखपत राय जो खालसे की लड़ाई काहनूवान (ज़िला गुरदासपुर) के जंगल के आस-पास हुई है वह 'छोटा घल्लूघारा' तथा २८ माघ संवत १८१८ (५ फरवरी सन् १७६२) को जो अहमद शाह अब्दाली के साथ रायपुर गुज्जरवाल के पास कुप्प रुहीड़े के पास स्थित हुई, वह 'बड़ा घल्लूघारा' सिक्ख इतिहास में प्रसिद्ध है।"

बहुत सारे इतिहासकारों ने इस घल्लूघारे में ३५ हज़ार सिंघों, सिंघणियों, बच्चों व बुजुर्गों की शहादत का ज़िक्र किया है। इस घल्लूघारे में सिंघों के बड़े जत्थेदार गंभीर रूप से घायल हो गए थे। यह हमला इतना अचानक था कि उनको संभलने का मौका भी नहीं मिला। अहमद शाह अब्दाली ने सिक्खों को खत्म करने के मनसूबे से हमला किया। इस घल्लूघारे में सिक्खों का बहुत नुकसान इस कारण से भी हुआ क्योंकि इस समय सिंघों के परिवार भी उनके साथ थे। वह बच्चों, औरतों व बुजुर्गों को सुरक्षित स्थान की तरफ ले जाने की फिराक में थे।

इतिहास में इस युद्ध का वर्णन बहुत मार्मिक रूप में दर्ज हैं। ५ फरवरी १७६२ को प्रात: काल ही ज़ैन ख़ान सेना लेकर आ पहुंचा और उसने कासिम ख़ान को सिंघों पर आक्रमण करने का आदेश दिया। इस प्रकार सिंघों पर अचानक आक्रमण हो गया उनको तो शत्रु के एकत्रित होने का पता ही न चला वे सहज में ही फंस गए। इस समय उनके साथ स्त्रियां, बच्चे व बूढ़े लोग ही थे। सिंघों, सिंघणियों, बच्चों व बुजुर्गों ने खुले आसमान तले पल-पल पीछा करती मौत का सामना करते हुए दिन काटे। इन सभी को वे किसी सुरक्षित टिकाने पर पहुंचाने की योजना बना रहे थे। मलेरकोटला से लगभग छ: मील उत्तर में, कुप्प ग्राम के पास कासिम ख़ान ने इन पर आक्रमण किया। समाचार मिलते ही सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया, स. शाम सिंघ अटारी, स. चढ़त सिंघ व कुछ अन्य सरदार भी आ पहुंचे और युद्ध शुरू हो गया। सूर्योदय के साथ ही ज़ैन ख़ान को संदेश मिला कि शाह ने अपने उज़बेक दस्तों को आदेश दिया है कि जहां भी कोई सिक्ख लिबास में दिखाई दिया, तो उसे मार डाला जाए। अत: ज़ैन ख़ान अपने आदमियों से कहे कि वे अपने सिरों पर वृक्षों के हरे पत्ते या हरा घास टांग लें, ताकि उनको पहचाना जा सके।

सिक्ख सरदारों के आ जाने से कासिम ख़ान उनका सामना न कर सका और मलेरकोटला की ओर भाग निकला। इस समय सरदारों ने विचार किया कि जत्थे को मालवा क्षेत्र की ओर ले जाया जाए। अभी वे लगभग तीन मील ही गए होंगे कि शाह-वली ख़ान और भीखन ख़ान ने उन पर धावा बोल दिया।

**मुख्य संपादक, जागो इंटरनेशनल, गांव व डाक: मंगवाल, ज़िला संगरूर फोन : +९१९८१४८५१५००*

परंतु इनकी सेना सिंघों को पछाड़ न सकी। खालसा ने जत्थे के इर्द-गिर्द वृत्त (चेन) बना रखा था। वे चलते-चलते लड़ते थे और लड़ते-लड़ते चलते थे। वे कई बार पीछे मुड़ कर शत्रु पर टूट पड़ते और उसे पीछे धकेल कर पुनः जत्थे के साथ आ मिलते।

अहमद शाह अब्दाली ने जब देखा कि उसका वज़ीर शाह-वली ख़ान सिंघों का वृत्त तोड़ नहीं सका तो उसने सरदार जहान ख़ान को और सेना देकर भेजा परंतु वह भी कुछ न कर सका। खालसा की पंक्तियां तोड़ने के लिए और अफगानी सेना भेजी गई, लेकिन सिंघों ने शत्रु को जत्थे तक न पहुंचने दिया। जहां भी आवश्यकता होती, सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया और सरदार चढ़त सिंघ वहीं अश्व (घोड़ें) लेकर उपस्थित हो जाते। सिक्ख गुरबाणी की पंक्तियों को अपनी रसना से उच्चारण करते हुए 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जैकारे बुलंद करते और सरदारों के संकेतों के अनुसार ही सिंघ जत्थे की सुरक्षा करते।

अहमद शाह अब्दाली ने जब देखा कि इस प्रकार जंगजू सिंघों पर करारी चोट करना संभव नहीं है तो उसने क्रोध में आकर ज़ैन ख़ान और लक्ष्मी नारायण को संदेश भेजा कि आप आगे से, सिंघों के जत्थे को रोको। इसी तरह लड़ते हुए सिंघ अनेक गांवों में से गुज़रे परंतु किसी ने भी उनको शरण न दी। दुर्रानियों से डरते ग्रामवासी अपने दरवाज़े बंद कर लेते। वे इसी तरह आगे चलते रहे और दुश्मनों को मारते गए व खुद भी उनके हाथों शहीद होते रहे। जत्था कई मीलों में बिखरा हुआ था और प्रत्येक स्थान से वृत्त का एक जैसा मज़बूत रहना संभव ही नहीं था। जहां भी शत्रु को अवसर मिलता वह जत्थे का काफी नुकसान करता। सूर्यास्त के समय जत्था कुतबा और बाहमणी गांव के पास पहुंचा परंतु ये गांव तो मलेरकोटला के अफगानों के थे, जो कि शत्रु के साथी और सिंघों के दुश्मन बने हुए थे। इन गांवों के रंगड़ एकत्रित होकर, सिंघों के पीछे पड़ गए और यहां जत्थे का बहुत-सा नुकसान हुआ। तब सरदार चढ़त सिंघ ने रंगड़ों को मार-मार कर पीछे धकेल दिया। परंतु अब तक जत्थे का वृत्त कई जगह से टूट चुका था और जत्थे का बहुत नुकसान हो रहा था। इतनी बड़ी दुर्रानी फौज के सामने जत्थे की सुरक्षा प्रदान करना अति कठिन कार्य था परंतु तब भी सिंघ डटे रहे।

कुतबा और बाहमणी गांव के पास ही पानी का एक तालाब था। इसे देख, दोनों पक्ष, सिंघ और अफगान अपनी प्यास बुझाने के लिए इधर ही हो लिए। सुबह के भूखे प्यासे लड़-भिड़ रहे थे। पानी पीने लगे। इस प्रकार युद्ध अपने आप रुक गया। दुर्रानी फौज भी थक कर चूर हो गई थी। पिछले छत्तीस घंटों से निरंतर लड़ रहे थे। दूसरा अब सिंघों की घनी जनसंख्या वाले क्षेत्र आगे थे, अतः अहमद शाह अब्दाली ने और आगे जाना उचित न जान कर वहीं रुकना श्रेस्कर समझा। "प्राचीन पंथ प्रकाश" के लेखक रत्न सिंघ भंगू शहीद के पिता और चाचा दोनों ही इस युद्ध में जत्थे के साथ थे। उनके कथनानुसार रत्न सिंघ लिखता है कि एक स्थान पर सरदार जस्सा सिंघ का घोड़ा थक कर अटक गया, जस्सा सिंघ ने बहुत प्रयास किया लेकिन वह आगे नहीं बढ़ा। इस पर उन के पालक गुरमुख सिंघ ने घोड़े को मारने के लिए चाबुक उठाया। जस्सा सिंघ ने तुरंत उसे घूर कर रोका और कहा, 'कहीं इसके चाबुक न मार देना।' लोग देखेंगे तो कहेंगे कि

सरदार रणभूमि से भाग निकला है। घोड़ा अड़ता था तो उसे जबरदस्ती पीटा। इस युद्ध में सरदार जस्सा सिंघ को बाईस घाव लगे लेकिन फिर भी वह आवश्यकता पड़ने पर हर जगह प्रसन्नतापूर्वक आ डटता था। रत्न सिंघ के अनुसार–

ज़खम बहुत जस्सा सिंघ खाए,
तीर गोली औ तेग घाई आए।
आप मारै औ उनके झेलै,
सौंहे मत्थे रख्ख घोड़े मेलै ॥८१॥
जस्सा सिंघ खाए बाइ घाई,
तौ भी सिंघ जी लड़तो जाए ॥

इसी प्रकार अन्य सरदारों को भी अनेकों घाव लगे। शायद ही ऐसा कोई सरदार होगा जिसे कम से कम पांच सात घाव न लगे हों।

सरदार सबै ज़खमी भए, साबत रहयो न कोई।
लइ शहीदी भी घनन गिणती सभन न होई ॥१४७॥
चढ़ सिंघ ज़खम गिणे न जाए, तीर तरवारन जो नेजे खाए।

जत्थों का जो नुकसान इस दिन हुआ, उसका सही अनुमान लगाना तो कठिन है परंतु सरदार कर्म सिंघ के अनुमान से पंद्रह बीस हज़ार के लगभग सिंघ, सिंघणियां, बच्चे व बुजुर्ग यहां शहीद हो गए। इससे पहले एक ही दिन में इतना जन बल का नुकसान पहले कभी नहीं हुआ था। इसी कारण सिंघ इस कहर को भयंकर नरसंहार कह कर भी याद करते हैं और इसे 'बड़ा घल्लूघारा' कहा जाता है।

यह खालसा पंथ की चढ़दी कला तथा हौसले का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस घल्लूघारे की निशानियां आज भी इस क्षेत्र के गांवों में मिलती हैं। आधुनिक समय में यह घल्लूघारा समाज को दिशा प्रदान करने वाला है। सिंघों के भविष्य को बहुत बड़ा नुकसान पहुंचा पर वह फिर उठ खड़े हुए तथा इससे आगे दुर्रानियों को हरा कर पंजाब में शक्तिशाली राज्य कायम किया। आज कुप्प रुहीड़ा के स्थान पर एक बहुत खूबसूरत स्मारक कायम किया गया है जो आने वाली पीढ़ियों को इस जगह के महत्त्व को दर्शाता रहेगा।

गुरुद्वारा कोठा साहिब, वल्ला

(पृष्ठ ३२ का शेष)

'वल्ला' गांव में पहुंच गई और मसंदों की करतूत पर खेद व्यक्त करते हुए क्षमा मांगी तथा वापिस श्री अमृतसर पधारने के लिए निवेदन किया। गुरु जी ने श्री अमृतसर की महिला-संगत की श्रद्धा को देखते हुए उन्हें 'माईआं रब्ब रजाईआं' कहा। फिर गुरु जी भाई मक्खण शाह और अपने अन्य सिक्खों के साथ पुनः बकाला गांव रवाना हो गए।

माई हरीआं का वह 'कोठा' (मकान) जहां पर गुरु जी ने अपने चरण रखे थे, वह गुरु जी के चरण-स्पर्श से सदा के लिए 'कोठा साहिब' बन गया और वर्तमान में गुरुद्वारा कोठा साहिब (गांव वल्ला) के नाम से विख्यात है। इतिहासकारों के मुताबिक महाराजा रणजीत सिंघ ने अपने राज्य-काल के दौरान २० बीघा ज़मीन इस गुरुद्वारा साहिब के नाम लगवाई थी।

माघ मास की पूर्णिमा को गुरुद्वारा कोठा साहिब, गांव वल्ला (श्री अमृतसर) में बहुत भारी जोड़-मेला लगता है, जो कई दिनों तक चलता है। संगत नवम् गुरु जी की पवित्र आमद की याद को ताज़ा करती हुई दूर-दूर से आकर इस स्थान के दर्शन कर निहाल होती है।

गुरबाणी चिंतनधारा : ९७

आसा की वार : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

अकाल रूप श्री गुरु नानक देव जी इलाही बाणी (धुर की बाणी) के रचनहार हैं। गुरु पातशाह के मुखारबिंद से उच्चारित पावन बाणी 'आसा की वार' को चिंतकों ने 'परमेश्वर की वार' की संज्ञा दी है। यह नित्तनेम की बाणी नहीं फिर भी इसे संगत रूप में हर रोज़ अमृत वेला गायन करने का नियम है और इस नियम को गुरु दशम् पातशाह जी ने युद्ध की विकट परिस्थितियों में भी गायन करके सिक्खों को एक विलक्षण दिशा-निर्देश दिया है कि किसी भी परिस्थिति में हमें 'धुर की बाणी' का दामन नहीं छोड़ना है।

आसा की वार बाणी का संक्षिप्त परिचय : चिंतकों के चिंतनानुसार 'आसा की वार' में उस परमेश्वर को सृष्टि का नायक माना गया है तथा जीव को अहंकार व कर्मकांडों को त्यागकर सत्य स्वरूप प्रभु एवं उसकी रची सृष्टि के जीवों से सच्चा प्यार होना चाहिए। अहंकार जो कि दीर्घ रोग हैं और उसकी निवृत्ति गुरु-कृपा से तथा गुरु द्वारा दर्शाये गए मार्ग से ही संभव है; अतः इसके लिए पुस्तकीय ज्ञान नहीं अपितु आत्मिक ज्ञान की आवश्यकता है। आसा की वार में ५९ सलोकों में तत्कालीन भारतीय समाज को मद्देनज़र रखते हुए विदेशी हमलावरों के भारत आगमन एवं उनके भारती समाज पर पड़े प्रभाव का भी वर्णन गुरु जी ने इस बाणी में स्पष्ट किया है। सलोकों में यह तथ्य स्पष्ट किया है कि किस तरह का समाज नहीं होना चाहिए उसके आगे यह भी स्पष्ट किया है कि किस तरह का समाज होना चाहिए, जिसमें व्यक्ति ऊंच-नीच के भेदभाव से ऊपर उठकर दया, धर्म, संतोष का धारणी हो, संयमशील तथा नेक कर्म करने वाला हो, निज स्वार्थ से ऊपर उठकर ही एक सुंदर समाज की कल्पना साकार हो सकती है। इस बाणी के ४४ सलोक श्री गुरु नानक देव जी द्वारा तथा १५ सलोक श्री गुरु अंगद देव जी द्वारा उच्चारित किए गए हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में कुल २२ वारें हैं, जिनमें 'आसा की वार' एक ऐसी आध्यात्मिक रचना है जिसका गायन सैंकड़ों वर्षों से किसी न किसी रूप में अमृत वेला में लगभग समस्त गुरुद्वारा साहिबान में किया जाता है। वैसे श्री गुरु नानक देव जी द्वारा तीन वारें उच्चारण की गई हैं आसा की वार के अतिरिक्त माझ एवं मलार।

सिक्ख जगत के शिरोमणि केंद्रीय स्थान सचखंड श्री हरिमंदर साहिब से प्रतिदिन प्रातःकाल सम्पूर्ण आसा की वार का कीर्तन होता है, जिसे वहां मौजूद संगत तो श्रवण कर आनंद विभोर होती ही है साथ ही देश-विदेश में घरों में बैठी संगतें टी.वी. चैनलों द्वारा इस बाणी का आनंद लेती हुई स्वयं को धन्य मानती है।

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

वह परिपूर्ण परमेश्वर एक है। उसका नाम सदैव सत्य स्वरूप है। वह सृष्टि का रचयिता एवं सर्वव्यापी है अर्थात् कण-कण में समाया हुआ है। वह भय से मुक्त है, वैर भाव से रहित है, आवागमन से मुक्त अर्थात् जिसका स्वरूप काल से परे है। वह योनियों में नहीं आता, जिसका प्रकाश स्वयं से हुआ है अतः उसे कोई

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३*

अस्तित्व में नहीं लाया (वह स्वयं के नूर से नूरी है) जो सतिगुरु की रहमत (कृपा) से मिलता है अर्थात् सतिगुरु की कृपा से उपरोक्त अनंत गुणों के मालिक का नाम जपा जा सकता है।

वस्तुतः उस परमेश्वर के उपरोक्त गुणों का ज़िक्र बार-बार गुरबाणी में आया है ओम शब्द तो उपनिष्द काल से अस्तित्व में था लेकिन एक (१) अंक ओम से पूर्व लगाकर श्री गुरु नानक पातशाह जी ने उस अकाल पुरख की विलक्षणता को अतीव सुंदर ढंग से शब्द रूप दिया है। गुरबाणी में आप जी अन्यत्र भी इसी भाव के दर्शन करवाते हैं :

एकम एकंकारु निराला ॥
अमरु अजोनी जाति न जाला ॥ (पन्ना ८३८)

गुरबाणी में उस ईश्वर की एकरूपता का बार-बार वर्णन करके बहुदेववाद का खंडन किया गया है यथा :

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं ॥
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू ॥
(पन्ना १२९१)

उस परमेश्वर का नाम भी सदैव सत्य स्वरूप है; जैसा कि जपु जी साहिब की बाणी में प्रारंभ से ही स्पष्ट किया गया है :

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ (पन्ना १)

इसी प्रकार गुरबाणी में उस दयालु प्रभु के निरभय एवं निरवैर स्वरूप को बहुतायत मात्रा में दर्शाया गया है अतः संक्षेप में मूलमंत्र को चिंतकों ने इस प्रकार स्पष्ट करने का प्रयास किया है :

ईश्वर एक है, उसका नाम पूर्ण सत्य है, वह सर्वस्व का सृष्टा है, उसकी किसी से भी शत्रुता नहीं, उसका बिंब कालातीत है, वह प्रजात नहीं, अपना जनक स्वयं ही है। मनुष्य केवल उसे गुरु-कृपा से जप सकता है।

आसा महला १ ॥
वार सलोका नालि सलोक भी महले पहिले के लिखे टुंडे अस राजै की धुनी ॥ (पन्ना ४६२)

आसा राग में उच्चारण की गई यह पावन बाणी श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उच्चारण की गई है। वार तथा सलोक भी श्री गुरु नानक देव जी द्वारा लिखित हैं अर्थात् श्री गुरु नानक देव जी ने ही पावन बाणी की रचना की है। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने सम्पूर्ण बाणी को बहुत ही सुंदर ढंग से तरतीब सहित रखकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की संपादना का महान कार्य किया। अब विचार करना है टुंडे अस राजे की धुनी पर। क्योंकि इस धुन पर इस बाणी को गायन करने का आदेश गुरु साहिब जी का है। इस संदर्भ में लगभग सभी व्याख्याकारों ने साखी में इस घटना का ज़िक्र किया है कि वस्तुतः टुंडा (लूला) जिसका एक हाथ नहीं होता उसे कहा जाता है और यहां घटना एक राजा की। प्रो. साहिब सिंघ जी, डॉ. जोध सिंघ जी महंत तीरथ सिंघ जी आदि अनेक उच्च कोटि के विद्वानों ने इस साखी का वर्णन किया यहां भी इस बाणी की व्याख्या से पूर्व संक्षिप्त रूप से इस प्रमाणिक साखी का वर्णन अनिवार्य प्रतीत होता है।

असराज सारंग नामक एक राजा का पुत्र था। सारंग की पहली पत्नी की मृत्यु के उपरांत उसने दूसरी शादी कर ली और असराज की सौतेली मां अपने सौतेले पुत्र पर विमोहित होकर उससे गलत सम्बंध कायम करना चाहा लेकिन धर्म पर कायम रहने वाले असराज ने ऐसा नहीं होने दिया तो उल्टा सौतेली मां (रानी) ने राजा से शिकायत कर दी। राजा ने क्रोधित होकर अपने पुत्र को मारने के आदेश दे दिए। राजा का मंत्री बड़ा सूझवान था और इस हकीकत को जानता था कि असराज निरपराध (बिकसूर) है। अतः मंत्री ने असराज का एक हाथ काट कर उसे टुंडा बनाकर जंगल में एक कुएं पर छोड़ दिया। वहां से बणजारों का एक

काफिला गुज़रा, उन्होंने असराज को शहर ले जाकर एक धोबी के यहां बेच दिया।

असराज ने धोबी के यहां सेवा कर ज़िंदगी बितानी शुरू कर दी; कुछ सयम उपरांत उस नगर का राजा जिसकी कोई संतान भी नहीं थी मृत्यु को प्राप्त हो गया। मंत्रियों ने आपस में यह फैसला किया कि सुबह सबसे पहले जो व्यक्ति शहर का दरवाज़ा खटखटाएगा उसे ही राजा बना दिया जाएगा। ईश्वर के कौतुक उस दिन धोबी का बैल खुल गया और असराज उसे ढूंढने निकला प्रात: उसी ने जा शहर का दरवाज़ा खटखटाया। असराज की तकदीर ही बदल गई उसे राजा बना दिया गया। राजपुत्र होने के नाते उसने राजप्रबंध बखूबी चलाया। कुछ समय पश्चात् पड़ोसी राज्यों में अकाल पड़ गया, दूसरे देशों के राजा अनाज लेने असराज के राज्य में आने लगे क्योंकि इसका राज्य कुशल प्रबंधक के कारण खुशहाल ही था। इस दौरान असराज के पिता का मंत्री भी आया असराज ने मंत्री को पहचान लिया। दोनों स्नेह पूर्वक मिले उसने मंत्री की खूब सेवा की तथा बिना कोई कीमत लिए बहुत सारा अनाज अपने पिता के देशवासियों के लिए भेजा।

मंत्री ने वापिस आकर राजा को असराज का सारा घटनाक्रम कह सुनाया तथा उसे प्रेरित किया कि अपने बेटे को यहां बुला लो। राजा जो अब तक वास्तविकता जान चुका था उसने मंत्री की सलाह को मानते हुए अपने पुत्र असराज को बुलाकर सारा राज भाग उसके सुपुर्द कर दिया।

ढाडियों ने यह सारा वृत्तांत (वार) में जोड़कर राजा के दरबार में गाया और बहुत-सा ईनाम हासिल किया। तभी से ढाडी ये वार गायन करते आ रहे हैं। अत: गुरु जी ने 'आसा की वार' को इसी वार की धुन पर गायन हेतु आदेश दिया।

सलोकु मः १ ॥
बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सद वार ॥
जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार ॥१॥ *(पन्ना ४६२)*

गुरु की महिमा बयान करते हुए श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं कि मैं अपने गुरु से एक दिन में सैंकड़ों बार बलिहारी (कुर्बान) जाता हूं। जिस गुरु ने साधारण मनुष्य से देवते (दैवी पुरुष) बना दिए और यह सब करने में अर्थात् देवते बनाने में उसे तनिक भी समय नहीं लगा।

संपूर्ण श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी में एक अकाल पुरख की महिमा का बयान है लेकिन गुरबाणी में मूलमंत्र में ही श्री गुरु नानक देव जी ने स्पष्ट किया कि यह महिमा गुरु-कृपा से ही की जा सकती है, अत: इसी भाव के दर्शन 'आसा की वार' बाणी के प्रारंभ में ही होते हैं, जहां गुरु पातशाह ने उस प्रभु से मिलाने वाले तथा मनुष्य से देवता बनाने वाले सतिगुरु पर कुर्बान जाने की हिदायत की है वह भी एक दिन में सैंकड़ों बार और साथ ही उस परिपूर्ण सतिगुरु की समर्थता को बयान किया है कि किस प्रकार वह मनुष्य से देवता बनाने में पल भर की भी देरी नहीं करता। इसलिए स्पष्ट ही है गुरु की आराधना, मंगल चरण अति आवश्यक है।

महला २ ॥
जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ॥
एते चानण होदिआं गुर बिनु घोर अंधार ॥२॥
(पन्ना ४६३)

दूसरे पातशाह श्री गुरु अंगद देव जी पावन फरमान करते हैं कि अगर सौ चंद्रमा और हज़ारों सूर्य भी उदय हो जाएं तो इतना बाहरी तौर से प्रकाश हो जाने के उपरांत भी गुरु के बिना (अंत:करण) में घोर अंधकार ही छाया रहता है। वस्तुत: प्रकृति का उदाहरण देकर गुरु

के महत्त्व को समझाया गया है कि किस प्रकार हम देखते हैं कि आसमान में उदित हुए एक चंद्रमा और सूरज से ही कितनी रोशनी हो जाती है और अंधेरा दूर हो जाता है; लेकिन गुरु पातशाह तो यहां यह स्पष्ट कर रहे हैं ऐसे सैंकड़ों चंद्रमा तथा हज़ारों सूरज भी अगर आकाश में उदय हो जाते हैं तब भी गुरु के बिना घोर (गहरा) अंधेरा ही रहेगा। कारण बाहरी रोशनी से अंदर रोशनी नहीं हो सकती जैसे बाहर के पुस्तकीय ज्ञान से अंदर ज्ञान का प्रकाश नहीं होता ठीक उसी प्रकार गुरु के ज्ञान के बिना अंदर के अज्ञान का अंधकार नहीं मिट सकता। क्योंकि 'गुरु' शब्द का अर्थ ही है 'गु' अंधकार 'रु' प्रकाश अर्थात् जो अंधेरे से उजाले की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर तथा नश्वरता से अमरता की ओर ले जाए, वही सच्चा गुरु है। गुरबाणी में गुरु के महत्त्व को अनेकों बार दर्शाया गया है जिसमें अपने मन को प्रबोधित किया गया है कि हे मन तू बार-बार गुरु का सिमरन कर क्योंकि वास्तव में गुरु के बिना कोई सच्चा साथी नहीं है यथा गुरबाणी प्रमाण :

गुरू गुरू गुरु करि मन मोर ॥
गुरू बिना मै नाही होर ॥
गुर की टेक रहहु दिनु राति ॥
जा की कोइ न मेटै दाति ॥१॥
गुरु परमेसरु एको जाणु ॥
जो तिसु भावै सो परवाणु ॥१॥ रहाउ ॥

(पन्ना ८६४)

वास्तव में गुरु एवं परमेश्वर एक ही रूप हैं।

अतः हे मन! बारंबार गुरु का जाप कर वहीं निर्मल बुद्धि एवं परम सत्ता प्रदान करने वाला सर्वकला समर्थ है यथा गुरबाणी प्रमाण :

जउ हरि बुधि रिधि सिधि चाहत गुरू गुरू गुरु करु मन मेरे ॥ *(पन्ना १४००)*

मः १ ॥
नानक गुरू न चेतनी मनि आपणै सुचेत ॥
छुटे तिल बूआड़ जिउ सुंञे अंदरि खेत ॥
खेतै अंदरि छुटिआ कहु नानक सउ नाह ॥
फलीअहि फुलीअहि बपुड़े भी तन विचि सुआह ॥३॥

उपरोक्त सलोक में श्री गुरु नानक पातशाह जी ने ऐसे अहंकारी लोगों का ज़िक्र किया है जो गुरु मार्ग पर न चलकर स्वयं को ही बुद्धिमान समझते हैं, उनकी तुलना खेत में पड़े खाली तिलों से कर उनकी व्यर्थता को जग-जाहिर किया है।

श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं कि जो व्यक्ति सतिगुरु का स्मरण नहीं करते अपने ही मन में सुचेत अर्थात् बुद्धिमान बने बैठे होते हैं, उनकी दशा ठीक वैसी ही होती है जैसे निरर्थक (सार रहित थोथे) तिलों को व्यर्थ (बिकार) समझकर सूने खेतों में फेंक दिया जाता है। खेत में पड़े ऐसे तिलों के अनेक मालिक बन जाते हैं अर्थात् वे किसी एक स्वामी (मालिक) के नहीं रहते। वे (ऐसे तिल) फलीभूत अर्थात् पूरी तरह भरे हुए दिखाई तो देते हैं लेकिन उनके अंदर तेल न होकर राख ही भरी होती है।

वस्तुतः जब जीव अपने हृदय से चतुराइयां दिखा कर गुरु को हृदय से विस्मृत कर देता है अर्थात् भुला देता है और गुरु के मार्गदर्शन की ज़रूरत नहीं समझता तो पांचों विकार इसके मालिक बन जाते हैं और यह उनका गुलाम बन जाता है एवं विकारों का शिकार हुआ यह मन सदैव दुखी रहता है और सच्चे गुरु के बिना इसके जितने भी मालिक हों, सलाहकार हों उनसे देखने से बाहरी रूप से तो यह प्रतिष्ठित दिखाई देगा लेकिन अंदर से यह उन्हीं तिलों की तरह खोखला, व्यर्थ ही होगा जिसकी कोई कीमत नहीं। जैसे बाहरी रूप से तो वे तिल भी फलते और फूलते हैं लेकिन अंदर कोई सार तत्व नहीं अर्थात् उनकी कीमत फूटी कौड़ी भी नहीं। अतः गुरबाणी हमें समस्त चतुराइयां छोड़कर

उस मालिक की रज़ा में रहने को आदेशित करती है यथा जपु जी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी का पावन फरमान है :

सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि ॥
किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥१॥
(पन्ना १)

भक्त कबीर जी ने भी इस संदर्भ में कलयुगी जीवों को यही पावन सेध दी है कि इस मन को ईश्वर से जोड़कर रखना चाहिए क्योंकि भोले भाव से प्रभु मिलता है, चतुराइयों से नहीं :

रे जन मनु माधउ सिउ लाईऐ ॥
चतुराई न चतुरभुजु पाईऐ ॥ (पन्ना ३२४)

पउड़ी ॥
आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ ॥
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ ॥
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ ॥
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ ॥
करि आसणु डिठो चाउ ॥१॥ (पन्ना ४६३)

इस पउड़ी में गुरु पातशाह जी ने उस परमेश्वर को सर्वकला समर्थ बताते हुए जीवों की उत्पति एवं फिर उनकी जीवन लीला का अंत, सब कुछ का कारण उस करता पुरख को ही बताया है। स्वयं से प्रकाशवान उस परमेश्वर के निर्गुण, निरंकारी रूप एवं उसी में रूपाहित सगुण साकारी रूप को भी बयान किया है कि किस प्रकार वह परमेश्वर इस जगत रचना में वास करता हुआ भी निर्लेप रूप है।

श्री गुरु नानक देव जी पावन फरमान करते हैं कि उस परिपूर्ण परमेश्वर ने अपनी सृजना आप ही की है और अपने नाम का रचयिता भी वह आप ही है। दूसरा उसने प्रकृति की रचना भी स्वयं की है और फिर उसमें व्यापक होकर स्वयं अपनी बनाई कुदरत को आप ही उत्साहपूर्वक अर्थात् बड़े चाव से देख रहा है।

हे प्रभु! तूं आप ही जीवों को दातें बख़्शने वाला है, अर्थात् प्रसन्न होकर सबको दातें देता है तथा रहमतें करता है। तूने ही यह जीवन दिया है और तूं ही इसे वापिस ले लेगा। तूं प्रकृति में आसन जमाकर आप ही उसमें बैठा हुआ सारा तमाशा देख रहा है।

वस्तुत: उपरोक्त पउड़ी के अनुसार वह परमेश्वर निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों में विद्यमान है। गुरबाणी में परमेश्वर को समस्त रूपों में बयान किया गया है जैसा कि पंचम पातशाह की पावन बाणी में इसी भाव के दर्शन होते हैं यथा :

सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि ॥
आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि ॥
(पन्ना २९०)

वास्तव में जीवात्मा एवं परमात्मा का अंश-अंशी सम्बंध है, इसलिए परमेश्वर कर्त्ता रूप में जीव के कर्म में भी स्वयं समाया हुआ है अर्थात् मनुष्य कर्म भी उसी के हुक्मानुसार कर रहा है। वह परमेश्वर ज़िंदगी देता है और उसकी जब मौज में आता है वापिस भी ले लेता है, बेशक संसारी जीव इस वापिस लेने की क्रिया पर हमेशा दुखी ही रहता है परंतु गुरबाणी आशयानुसार जीव का जीवन उसकी अमानत है, जिसे लौटाते हुए हमें उसकी दी हुई वस्तु के लिए कोई गिला अथवा शिकायत नहीं करनी चाहिए जैसा कि गुरबाणी में समझाया गया है :

जिस की बसतु तिसु आगै राखै ॥
प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥ (पन्ना २६८)

क्योंकि जिस परमेश्वर के आगे किसी का कोई ज़ोर नहीं चलता उसकी रज़ा अर्थात् हुक्म के आगे सदैव जीव को नत्मस्तक रहना चाहिए इसी में ही सच्चा आनंद छिपा है। ❂

ख़बरनामा

छोटे साहिबज़ादों और माता गुजरी जी की याद को समर्पित दीवान टोडर मल्ल हाल में कवि दरबार करवाया गया

श्री अमृतसर : २८ दिसंबर : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा कलगीधर दशमेश पिता के फरज़ंद साहिबज़ादा बाबा ज़ोरावर सिंघ जी और साहिबज़ादा बाबा फ़तहि सिंघ जी व माता गुजरी जी की लासानी शहादत को समर्पित दीवान टोडर मल्ल हाल में कवि दरबार समागम करवाया गया। इस समागम में पंथ प्रसिद्ध कवियों द्वारा नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी, दशम पिता साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी, चार साहिबज़ादे, माता गुजरी जी और बाबा बंदा सिंघ बहादुर के बारे में अपनी कविताओं में सूक्ष्मता से वर्णन करते हुए संगत को गुर-इतिहास से परिचित करवाया गया।

कवि भाई बलबीर सिंघ बल्ल द्वारा माता गुजरी जी की जीवन गाथा प्रस्तुत करते हुए उनके जीवन और अद्वितीय कुर्बानी को बहुत ही भावपूर्ण शब्दों में कुछ इस तरह प्रस्तुत किया गया :

गुज़री जदों सरहंद 'च गुज़री,
गुज़री उत्ते की नहीं गुज़री?
कुल दुनिया ते पीड़ जो गुज़री,
किहा ज़ालम ने पी नी गुज़री
पती, पोते, परिवार वार के
बिलकुल कीती सी नहीं गुज़री
गुज़री दी कुर्बानी तक्क 'बल्ल
दुनिया कहे जीअ जीअ नी गुज़री

इसी तरह सरवंशदानी साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन वृत्तांत को ब्यान करते हुए कवि स. त्रलोक सिंघ दीवाना ने कुछ इस तरह ब्यान किया :

आओ! उन्हां दी पालिए लाज सारे,
जिन्हां कौम लई घालां घालियां ने।
पुत्र मौत दी घोड़ी ते चाहड़के वी,
चढ़ीआं मूंहां 'ते गिड्ड-गिड्ड लालियां ने।
दीवे खोपड़ी दे वट्टी आंदरां दी,
खून पा के जोतां बालियां ने।
वद्ध चढ़के कीमतां तारियां ने,
मेरी कौम लई कौम दे मालियां ने।

इसी तरह बीबा इंदरजीत कौर खालसा ने चमकौर की गढ़ी की दासतान ब्यान करते 'खूनी साके' की मार्मिक तस्वीर खींचते हुए श्रोतागण को इस प्रकार मंत्रमुग्ध किया।

नमस्कार है गढ़ी चमकौर दी नूं,
जूझे सोहणे अजीत ते जुझार जित्थे।
नमस्कार है खूनी सरहंद ताईं,
लाल कंधा दा बणे शृंगार जित्थे।

इस समागम में उपरोक्त कवियों के अतिरिक्त स. बलविंदर सिंघ संधा, स. अजीत सिंघ 'रत्न', स. मक्खण सिंघ मत्तेवाल, स. जोगिंदर सिंघ, स. सतबीर सिंघ 'शान' स. चैन सिंघ 'चक्रवती', स. बचन सिंघ 'गड़गज्ज', बीबा इंदरजीत कौर मोहाली, बीबी गुरमीत कौर, स. क्रिपाल सिंघ पटियाला आदि प्रसिद्ध कवियों ने अपनी बहुमूल्य शायरी के कमाल दिखाते हुए श्री फतहिगढ़ साहिब की पवित्र धरती पर हुए 'खूनी साके' को बहुत ही कुशलतापूर्वक प्रस्तुत किया।

इस समय भाई अवतार सिंघ, भाई बलदेव सिंघ और भाई परमिंदर सिंघ प्रचारक ने स्टेज सचिव की सेवा निभाई।

त्रै-शताब्दी कॉलेज ने गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी के इंटर कॉलेज हॉकी टूर्नामिंट २०१५-१६ में द्वितीय स्थान हासिल किया

श्री अमृतसर : ९ जनवरी : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रबंध तले चलाए जा रहे त्रै-

शताब्दी श्री गुरु गोबिंद सिंघ खालसा कॉलेज के विद्यार्थियों ने गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी के इंटर कॉलेज हॉकी टूर्नमिंट में द्वितीय स्थान हासिल किया। हॉकी टीम के कॉलेज पहुंचने पर कॉलेज की प्रिंसीपल बीबी जतिंदर कौर ने खिलाड़ियों को इस शानदार विजय की मुबारकबाद दी व सम्मानित किया।

प्रिंसीपल जतिंदर कौन ने कहा कि जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की योग्य अगुआई तथा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के प्रबंध तले चलाए जा रहे त्रै-शताब्दी श्री गुरु गोबिंद सिंघ खालसा कॉलेज के स्टॉफ व हॉकी टीम के कड़े परिश्रम के सदका ही इंटर कॉलेज हॉकी टूर्नमिंट में द्वितीय स्थान प्राप्त हो सका है। उन्होंने कहा कि इस कॉलेज में उच्चत्म शिक्षा के साथ-साथ विद्यार्थियों को बाणी व बाणे के साथ जोड़कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के लड़ लगने हेतु भी प्रेरित किया जाता है। उन्होंने कहा कि कॉलेज के मेहनती व तजुर्बेकार स्टॉफ व विद्यार्थियों की लग्न के सदका इस कॉलेज ने सभ्याचार तथा खेलों के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान डालकर नाम कमाया है। उन्होंने बताया कि विद्यार्थियों द्वारा हॉकी का द्वितीय स्थान हासिल करने के साथ-साथ बेडमिंटन में तृतीय, बाल बेडमिंटन में द्वितीय, फुटबाल व टेबल टेनिस में पांचवा स्थान हासिल किया है।

खिलाड़ियों को सम्मानित करने के मौके प्रिंसीपल जतिंदर कौर के साथ प्रो. गुरजीत सिंघ, स. अमर सिंघ सुप्रिंटैंडेंट तथा स. सुखदीप सिंघ डी. पी. ई. मौजूद थे।

अमेरिका के गुरुद्वारा साहिब में मौजूद संगत पर शरारती अनसरों द्वारा हमला अति निंदनीय : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : ११ जनवरी : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर ने अमेरिका के एक गुरुद्वारा साहिब में कुछ शरातरी अनसरों द्वारा आपसी खींचतान के कारण गुरु-घर में कथा श्रवण कर रही संगत पर हमला करने एवं उनकी आखों में सप्रे (छिड़काव) छिड़कने को अति दुखदायक घटना बताया है। उन्होंने कहा कि ऐसे लोग गुरु-घर में नत्मस्तक होने नहीं बल्कि माहौल बिगाड़ने आते हैं जोकि अति चिंताजनक विषय है। उन्होंने कहा कि गुरुद्वारा साहिबान में प्रधानता की भूख के कारण ऐसे लोग खुद तो कुछ कर नहीं सकते किंतु गुरु-घर के प्रबंध में दख़्लांदाज़ी करके व गुरु-यश सुनने आई संगत को परेशान करके बेगाने देश में वहां के लोगों के लिए तमाशा बनते हैं। उन्होंने कहा कि इस तरह करने से पूरी सिक्ख कौम का सिर शर्म से झुकता है व दूसरे देशों में भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। उन्होंने अमेरिका की सिक्ख संगत को अपील करते हुए कहा कि वो शांति व संयम से काम लेते हुए इस मामले का फौरन कोई हल निकालें ताकि गुरु-घरों की शांति को बरक़रार रखने के साथ-साथ सिक्ख कौम का सिर ऊंचा उठ सके। उन्होंने कहा कि विदेशों में गुरुद्वारा साहिबान में इस तरह की घटनाएं घटित होना अति दुखदायक हैं; साथ ही आम लोगों के लिए चर्चा का विषय भी बन जाती हैं। उन्होंने कहा कि गुरु-घरों में सेवा-सिमरन की जगह इस तरह का व्यवहार (कार्य) अति निंदनीय है।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दिलजीत सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०२-२०१६